ओ३म्

वैदिक संस्कृति का उद्घोषक

वैदिक सार्वदेशिक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली का साप्ताहिक मुख-पत्र

शुल्क :- एक प्रति 5 रुपया (भारत में) वार्षिक 250 रुपये तथा आजीवन 2500 रुपये

वर्ष 13 अंक 49 कुल पृष्ठ-8 16 से 22 अगस्त, 2018 दयानन्दाब्द 194 सृष्टि सम्वत् 1960853119 सम्वत् 2075 भा.कृ.-13

आर्य समाज के गौरवमय अमर इतिहास से प्रेरणा लें आर्यजन

– प्रो. विट्ठलराव आर्य

आर्य समाज का विजय पर्व

भारतीय संघ में हैदराबाद राज्य का विलीनीकरण और आर्य समाज की भूमिका

वेद के अनुयायी और उसके प्रचारकों को सदैव ही संघर्ष करना पड़ा। इसी संघर्ष की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कड़ी 'हैदराबाद आर्य सत्याग्रह' (1939) है। कतिपय विद्वान् इस महान् एवं सफल सत्याग्रह को ''हैदराबाद में धर्मयुद्ध'' नामक संज्ञा से भी सम्बोधित करते हैं। वस्तुतः यह हमारे गौरवपूर्ण इतिहास का अति महत्वपूर्ण अध्याय है, जिसे पढ़कर हमारी आने वाली पीढ़ी गर्व से आत्माभिमान अनुभव करेगी।

हैदराबाद (तत्कालीन दक्षिण) आर्य सत्याग्रह वस्तुतः एक युद्ध था जिसे हैदराबाद राज्य में आर्य समाज के अधिकारों और वैदिक धर्म के प्रचार स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए लड़ा गया था। प्रामाणिक तथ्यों के अनुसार आर्य समाज की शिरोमणि सभा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली द्वारा निरन्तर छः वर्ष तक वैध उपायों से इस समस्या के हल का प्रयत्न किया गया था, किन्तु जब ये सारे उपाय निष्फल हो गए, तब निजाम सरकार ने आर्य समाज को सत्याग्रह करने के लिए बाध्य कर दिया।

आर्य समाज के इस निर्णय से अन्य राजनैतिक दलों तथा साम्प्रदायिक संस्थाओं को बहुत पीड़ा हुई। इन्हें अपना नेतृत्व छिन जाने की वेदना सताने लगी। इस कारण आर्य समाज के इस सत्याग्रह को साम्प्रदायिकता का आवरण देने का असफल प्रयास किया। यह कटु सत्य है कि तुष्टीकरण ही इस देश के विभाजन का एक मात्र कारण सिद्ध हो चुका है। सत्यमेव जयते नानृतम्' और असत्यमेव न जयते' के मूल सिद्धान्त को मानने वाले उस आर्य समाज के सम्मुख न तो तुष्टीकरण रूपी नाग अपना फन ऊँचा कर पाया और न गिरगिट की तरह रंग बदलने वाली कुटिल चाल ही सफल हुई। इतना ही नहीं इन्हीं तत्वों के कारण आर्य समाज के प्रति लोगों की सहानुभूति को घटाने के स्थान पर बढ़ाया ही। आर्य समाज के नेताओं ने प्रारम्भ से ही इस बात को स्पष्ट कर दिया था कि यदि किसी हिन्दू राज्य में आर्य समाज पर इसी प्रकार की आपत्ति आती है जिस प्रकार की निजाम राज्य में आई थी, तो वे वहां भी इसी उपाय अर्थात् सत्याग्रह धर्म युद्ध का आश्रय लेते आर्य समाज की घोषणा ने समाज और राष्ट्र के सम्मुख एक स्पष्ट और स्वच्छ विशाल मार्ग प्रस्तुत कर दिया। आर्य समाज ने दाहिने हाथ से कर्म किया और बाएं हाथ में विजय श्री अपनी शोभा बढ़ाने लगी।

हां, जब आर्य समाज की सामनीति जब छः वर्ष पश्चात् भी सफल न हुई तब भी आर्य समाज निराश न हुआ। उन्होंने सर्वप्रथम समस्त आर्य जगत् की सम्मति ज्ञात करने के लिए दिसम्बर, 1938 के अन्तिम सप्ताह में शोलापुर में आर्य महासम्मेलन का आयोजन किया। इस सम्मेलन का आयोजन इस 'नीति' के अनुसार था कि सम्भवतः निजाम सरकार के रवैऐ से आर्य समाज को सत्याग्रह न करना पड़े, किन्तु ऐसा कुछ नहीं हुआ और उस निजाम की पूंछ पूर्ववत् टेढ़ी ही रही। अन्ततः आर्य सम्मेलन शोलापुर को अपने समस्त निश्चयों के अनुसार सत्याग्रह की घोषणा करना पड़ी। इसके सर्वप्रथम सर्वाधिकारी श्री महात्मा नारायण स्वामी जी बनाए गए। इन समस्त निश्चयों में निश्चय क्र. 3 में स्पष्ट कहा गया था - 'राज्य अथवा कर्मचारियों को न तो तबलीग शुद्धि मतान्तरण में भाग चाहिए न उसे प्रोत्साहन करना चाहिए। न जेलों में हिन्दू कैदियों तथा स्कूलों में हिन्दू बच्चों को मुसलमान बनाया जाना चाहिए और न हिन्दू अनाथ, मुसलमानों के सुपुर्द किए जाने चाहिए।'' (सन्दर्भ - आर्य डायरेक्टरी, 1942, प्र. 213)

इस विशाल सत्याग्रह के संचालन हेतु 'सत्याग्रह समिति' नियत की गई। चूंकि इस आन्दोलन के सम्बन्ध में मिथ्या और भ्रमपूर्ण बातें फैलाई जा रही थीं, इसलिए उद्देश्य की पवित्रता के लिए सत्य और अहिंसा का विशुद्ध रूप से पालन अत्यावश्यक कहा गया।

धर्म युद्ध की प्रथम आहुति

- निश्चयानुसार पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज ने दिनांक 29 अगस्त, 1939 को कतिपय सत्याग्रहियों के साथ हैदराबाद राज्य में प्रवेश किया। उन्हें प्रथमतः पकड़कर पुलिस निजाम राज्य के बाहर कर गई। किन्तु जब स्वामी जी ने पुनः वहां जाकर सत्याग्रह प्रारम्भ कर दिया, तब उन्हें पकड़कर एक साल के कारावास का दण्ड दिया गया। बस फिर क्या था, दावानल की भांति पूरे देश में जोश फैल गया और जनता बड़े से बड़े त्याग के लिए तैयार हो गई। आर्य समाज भी अंगड़ाई लेकर युद्ध के लिए ताल ठोंककर तैयार हो गया। सत्याग्रह के रहस्य को समझकर मार्च, 1939 में निजाम सरकार की ओर से समझौते की चर्चा प्रारम्भ हुई, किन्तु 9 अप्रैल, 1939 में शोलापुर में अन्तरंग सभा की आवश्यक बैठक हुई। इधर निजाम सरकार पीछे हट गई, इस कारण इसमें कोई विशेष गति नहीं आई।

उधर निजाम सरकार का दमन चक्र प्रबलता से घूमने लगा। ज्यों-ज्यों दमन चक्र बढ़ने लगा, त्यों-त्यों सत्याग्रह में उग्रता और तीव्रता बढ़ने लगी। इधर तुष्टीकरण की नीति वाले दलों ने इसके सम्बन्ध में अनेक भ्रांतियां फैलाना शुरू कर दीं। किन्तु जनता ने आर्य समाज की न्याय प्रियता, सत्यतापरक अहिंसा के मूल्य का आकलन करना शुरू किया, इस कारण 'तुष्टीकरण' की कुचालें निष्प्रभावी हो गई। अब इस धर्म युद्ध ने और भी व्यापकता प्रकट कर ली। कहते हैं - यह युद्ध इतना व्यापक और इतना प्रसिद्ध हो गया था कि उन दिनों देश की सार्वजनिक हलचलों में इसके सिवा और कोई हलचल सर्वोपरि न थी। सभी भाषायी तथा आंग्ल पत्रों में इस युद्ध के अतिरिक्त कोई चर्चा न थी। यह ध्यान रखने का तथ्य है कि देश के अग्रणियों की चिन्ता का कोई विषय था तो केवल यह युद्ध था।

यह युद्ध और इसकी चर्चा भारत की सीमा तक ही सीमित न रही वरन् समुद्र पार पार्लियामेण्ट के भवनों तक जा पहुंची।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की आज्ञाओं और निर्देशों को आर्यजनता ने बड़ी तत्परता और सम्मान के साथ ग्रहण किया। यह एक ऐतिहासिक वस्तु बन गई। जब युद्ध अपने चरम पर था, उस समय 2,000 सत्याग्रही शिविरों में पड़े हुए आदेश की प्रतीक्षा कर रहे थे। इनमें हिन्दू, सिक्ख, मुसलमान तथा ईसाई बन्धु थे। हमारे अनुशासन एवं संयम की सभी आंग्ल पत्र तथा भाषायी पत्र भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहे थे। विशेषकर हिन्दू जनता ने आर्य समाज की विपत्ति को अपनी विपत्ति समझा और उसके निवारणार्थ उन्होंने आर्य समाज तथा आर्य समाजियों के साथ कन्धे से कन्धा भिड़ाया और ऐसा कौन सा त्याग था जो उसने इस अवसर पर न किया हो।

'असत्यमेव न जयते' के अनुसार आर्य समाज रूपी श्रीकृष्ण का पांचजन्य शंख एक बार पुनः ध्वनित हो उठा और उसने विजय की घोषणा की। निजाम सरकार ने आर्य समाज के इस सत्याग्रह के सम्मुख घुटने टेक दिए और उसने 'सुधारों' की घोषणा की। यह घोषणा 20 जुलाई सन् 1939 को की थी। इसके पूर्व दिनांक 17 जुलाई, 1939 को निजाम सरकार ने अपना निर्णय प्रकट कर दिया था।

इस सत्याग्रह में कुल 10,579 सत्याग्रही जेल गए थे। इसके अतिरिक्त 2,000 सत्याग्रही वे थे जो 8-8-1939 से पूर्व केन्द्रों में पहुंच गए थे और आदेश की प्रतीक्षा कर रहे थे।

इस प्रकार आर्य समाज द्वारा छेड़ा गया यह धर्म युद्ध जो कि अज्ञान, अन्याय और अभाव के विरूद्ध प्रारम्भ हुआ था, परमात्मा की कृपा सत्याग्रहियों के तप-त्याग तथा महान बलिदानियों के कारण सुखद अन्त के रूप में विजय श्री को प्राप्त कर सका। इन सभी श्रेष्ठ आत्माओं के प्रति आभार तथा प्रणाम।

- मनुदेव अभय, 'सुकिरण' अ-193, सुदामानगर, इन्दौर, (मध्य प्रदेश)

हैदराबाद के आर्य शहीदों को

श्रद्धांजलि

श्रद्धांजलि अर्पण करते हैं हम, करके उन वीरों का मान।
धार्मिक स्वतन्त्रता पाने को, किया जिन्होंने निज बलिदान।।
परिवारों के सुख को त्यागा, देश के अनेकों वीरों ने।।
कष्ट अनेकों सहन किए, पर धर्म न छोड़ा वीरों ने।।
ऐसे सभी धर्मवीरों के आगे शीश झुकाते हैं।
उनके उत्तम गुणगान को, हम निज जीवन में लाते हैं।।
अमर रहेगा नाम जगत में, इन वीरों का निश्चय से।
उनका स्मरण बनायेगा फिर वीर जाति को निश्चय से।।
करें कृपा प्रभु आर्य जाति में, कोटि कोटि हो वीर।
धर्म देश हित जोकि खुशी से प्राणों की आहुति दे वीर।।
जगदीश को साक्षी जान कर यही प्रतिज्ञा करते हैं।
इन वीरों के चरण चिन्ह पर चलने का व्रत करते हैं।।
सर्व शक्ति दे बल ऐसा, धीर-वीर सब आर्य बनें।
पर उपकार परायण निश दिन शुभ गुणकारी आर्य बनें।।

धर्मवीर नामावली

श्यामलाल जी, महादेव जी, राम जी श्री परमानन्द।
माधवराव, विष्णु भगवन्ता, श्री स्वामी कल्याणानन्द।।
स्वामी सत्यानन्द, महाशय मलखाना, श्री वेदप्रकाश।
धर्म प्रकाश, रामनाथ जी पांडुरंग, श्री शान्ति प्रकाश।।
पुरुषोत्तम जी, ज्ञानी लक्ष्मण राव, सुनेहरा वैंकटराव।
भक्त अरुणाराम जी, नन्हूं सिंह जी, गोविन्द राव।।
मदन सिंह जी, रतिराम जी, मान्य सदाशिव ताराचन्द।
श्रीयुत छोटेलाल, अशर्फीलाल तथा श्री फकीर चन्द।।
माणिकराव, भीमरावजी, महादेव जी, अर्जुनसिंह।
सत्यनारायण, वैजनाथ, ब्रह्मचारी दयानन्द, नरसिंह।।
राधाकृष्ण सरीखे निर्भय अमर हुए इन वीरों का।
स्मरण करें विजयोत्सव के दिन सब ही वीरों धीरों का।।

सम्पादक - प्रो. विट्ठलराव आर्य

'गुरुकुल शिक्षा प्रणाली बनाम् पब्लिक स्कूल'

- मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

मानव सन्तान को शिक्षित करने के लिए एक पाठशाला या विद्यालय की आवश्यकता होती है। बच्चा घर पर रह कर मातृ भाषा तो सीख जाता है परन्तु उस भाषा, उसकी लिपि व आगे विस्तृत ज्ञान के लिए उसे किसी पाठशाला, गुरुकुल या विद्यालय मे जाकर अध्ययन करना होता है। केवल भाषा से ही काम नहीं चलता अपितु अनेक विषय हैं जिनका ज्ञान गुरुकुल, पाठशाला या विद्यालय में कराया जाता है। उदाहरण के लिए मातृ भाषा के साथ हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी व कुछ अन्य भाषायें भी आवश्यकतानुसार सीखनी होती है। भाषा के साथ गणित, सामान्य ज्ञान, कुछ अध्यात्म, इतिहास, भूगोल, जीव विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, व्यायाम, रक्षा, चिकित्सा, कला आदि अनेक विषय हैं जिनका ज्ञान आज के समय में अति आवश्यक है। जीवन में मनुष्य को अपना व अपने भावी परिवार का जीवनयापन भी करना होता है अतः रोजगार दिलाने वाले व्यवसायिक विषयों का ज्ञान भी आवश्यक है। आजकल माता-पिता अपने सन्तानो को विज्ञान, वाणिज्य, कम्प्यूटर साइंस, इंजीनियरिंग व चिकित्सा आदि की शिक्षा दिलाते हैं जिससे वह किसी रोजगार से जुड़ कर सफलतापूर्वक भावी जीवन व्यतीत कर सके।

शिक्षा पद्धति की चर्चा आने पर आजकल मुख्य रूप से पब्लिक स्कूल पद्धति प्रचलित है जहां बच्चे को प्रायः अंग्रेजी भाषा के माध्यम से अध्ययन कराया जाता है और इसी भाषा के माध्यम से उसे गणित, साइंस व कला की शिक्षा दी जाती है। इण्टर या ग्रेजुएशन कर लेने पर वह इंजीनियरिंग, मेडीकल साइंस आदि अपने इच्छित विषय को लेकर व्यवसायिक कोर्स या स्नातक व स्नातकोत्तर उपाधियां प्राप्त कर सकता है जिसके बाद उसे रोजगार मिल जाता है और वह सुख-सुविधा पूर्वक जीवन व्यतीत करता है। दूसरी शिक्षा पद्धति हमारी प्राचीन गुरुकुलीय पद्धति है। गुरुकुल का उद्देश्य बालक का शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक व आत्मिक सर्वांगीण विकास करना होता है। यहां हम शिक्षा के बारे मे स्वामी दयानन्द की मान्यता का उल्लेख करना उचित समझते हैं। वह लिखते हैं कि शिक्षा उसको कहते हैं जिससे विद्या, सभ्यता, धर्मात्मता व धर्म में प्रवृत्ति, जितेन्द्रियतादि की वृद्धि होवे और अविद्यादि दोष छूटें। अज्ञान व बन्धनों से छूटना जिससे सिद्ध हो वह भी विद्या होती है। शिक्षा व भाषा अर्थात् शिक्षा का माध्यम का भी परस्पर गहरा सम्बन्ध है। बच्चा अंग्रेजी पढ़े इससे किसी का विरोध नहीं है परन्तु पहले वह मातृ भाषा सीखे, तत्पश्चात, भारत पृःठभूमि का बच्चा, हिन्दी व संस्कृत भाषा का ज्ञान प्राप्त करे, इनके माध्यम से वेद, उपनिषद्, दर्शन, मनुस्मृति, बाल्मिकी रामायण व महाभारत आदि का विस्तृत या काम चलाऊ ज्ञान प्राप्त करे, उसके बाद व साथ में वह अंग्रेजी, गणित व साइंस आदि विषयों का ज्ञान भी प्राप्त करे तो इसमें किसी को क्या आपत्ति हो सकती है। हिन्दी व संस्कृत के ज्ञान से वह भारत के आम व्यक्ति से जुड़ जाता है जबकि पहली कक्षा से अंग्रेजी का अध्ययन उसे कई प्रकार से हिन्दी पृःठभूमि के बच्चों से दूर करता है।

महर्षि दयानन्द ने 'मनुष्य' की परिभाषा की है। वह लिखते हैं कि 'मनुष्य उसी को कहना कि जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुणरहित क्यों न हों - उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती, सनाथ, महाबलवान् और गुणवान भी हो तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारूण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें, परन्तु इस मनुष्यपनरूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।'

हिन्दी में भी ज्ञान, विज्ञान सहित इतिहास, भूगोल व अध्यात्म विषयक विशद साहित्य है जो केवल अंग्रेजी को जानकर व उसमें अध्ययन कर उनसे लाभान्वित नहीं हुआ जा सकता। ऐसा व्यक्ति सर्वांगीण व्यक्तित्व वाला न होकर एकांगी होता है। अन्य विषयों की शिक्षा के साथ अध्यात्म विज्ञान विषय का विशद ज्ञान तो अनिवार्य कोटि में आना चाहिये इससे व्यक्ति चरित्रवान व कर्तव्यनिष्ठ नागरिक बनता है।

अध्यात्म का अनिवार्य ज्ञान क्यों?, तो इसका उत्तर है कि प्रत्येक मनुष्य को सर्वप्रथम यह जानना है कि यह संसार कब, कैसे व किसके द्वारा बनाया गया है। संसार को बनाने वाली सत्ता कौन है व अब कहां है? वह दिखाई क्यों नहीं देती?क्या उसे देखा जा सकता है?यदि हां तो कैसे और नही तो क्यों?उसका देखना आवश्यक है या नहीं?यदि आवश्यक है तो क्यों व उससे हमें व सब देखने वालों को क्या लाभ होगा?हम कौन हैं?हममें जो चेतन तत्व अर्थात् जो हम स्वयं है, वह कैसे उत्पन्न होता है?क्या वह अनादि, अनुत्पन्न, नित्य व अविनाशी है या उत्पन्न हुआ व मरण धर्मा है?यदि जीवात्मा उत्पन्न धर्मा व मरण धर्मा है तो हमें किसने व किस प्रयोजन से बनाया है?सृष्टि को किस पदार्थ, वस्तु या raw material या कारण तत्व से बनाया गया है?क्या यह सृष्टि पहली बार बनी है या इससे पूर्व भी बनी है?यदि इससे पूर्व भी बनी है तो उसमें क्या युक्ति व प्रमाण है और यदि पहली बार ही बनी है तो इसमें भी क्या युक्ति व प्रमाण है?मनुष्यों की आकृति-शकल-सूरत, लम्बाई, चौड़ाई, आकार-प्रकार व सुन्दरता-असुन्दरता तथा ज्ञान व अज्ञान का भेद क्यों है?क्या हम जो कर्म करते हैं उनका फल हमें भोगना होगा या वह क्षमा हो जायेगें?यदि वह क्षमा होते हैं तो कौन क्षमा करता है व क्यों करता है, उसके नियम क्या हैं एवं कब, कैसे व किसने बनाये हैं?यदि नहीं होते तो क्यों नहीं होते?ऐसे अनेकानेक प्रश्न है जिसके लिए हमें हिन्दी व संस्कृत का अध्ययन तथा साथ में वेद व वैदिक साहित्य का अध्ययन भी करना है। अग्रेजी व दुनियां की अन्य किसी भी भाषा का अध्ययन करलें, इन व ऐसे प्रश्नों के पूर्ण व सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिलते। अतः हिन्दी व संस्कृत का अध्ययन परम आवश्यक हैं। यह न केवल भारतीय व हिन्दी भाषियों के लिए अपितु दुनियां के सभी लोगों के लिए समान रूप से आवश्यक एवं उपादेय है।

शिक्षा व अध्ययन द्वारा हमें यह भी जानना है कि हमारे जन्म व जीवन का उद्देश्य क्या है अन्यथा शिक्षा अधूरी सिद्ध होगी व जीवन को सन्मार्ग के स्थान पर कुमार्ग पर ले जा सकती है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन

का जो उद्देश्य है, उसका उत्तर वेद व वैदिक साहित्य में ही मिलता है। हमारे जीवन का उद्देश्य सदा-सदा के लिए जन्म-मरण के दुःखों से मुक्ति व निवृत्ति है जो वैदिक शिक्षाओं का पालन यथा, सन्ध्या, यज्ञ, माता-पिता-आचार्य-गुरुजनों-वृद्धों की सेवा तथा पशु-पक्षियों आदि अन्य जीव-जन्तुओं के प्रति मैत्रीभाव रखकर प्राप्त किया जा सकता है। इसके साथ योगाभ्यास व योगसाधना से ईश्वर का साक्षात्कार कर परम सुख व आनन्द की प्राप्ति होती है जो भौतिक पदार्थो से कभी भी प्राप्त नहीं हो सकता है। इसे केवल वेदों के आचार्य व अध्येता ही समझा सकते हैं। संक्षेप में यह जान लेना उचित होगा कि ईश्वर सर्वव्यापक और आनन्दस्वरूप है एवं योग द्वारा उसका सान्निध्य मिल जाने से जीवात्मा के दुर्गण व दुःखादि दूर होकर ईश्वर के गुण आदि के अनुरूप होकर जीवात्मा व मनुष्य के दुःखों की निवृति व आनन्द की उपलब्धि होती है। सन्ध्या व ध्यान से ईश्वर का सान्निध्य प्राप्त होने पर ईश्वर का साक्षात्कार होता है और यह जन्म-मरण के दुःखों को दूर कर मुक्ति व मोक्ष प्रदान कराता है। अतः संस्कृत व हिन्दी के साथ अध्यात्म, वेद एवं वैदिक साहित्य का अध्ययन अति आवश्यक है। इसके साथ ही वह सम्पूर्ण शिक्षा जो अंग्रेजी पद्धति द्वारा दी जाती है, वह भी विद्यार्थियों को मिलनी चाहिये। इसके लिए ही गुरुकुलीय शिक्षा है जहां पुरातन व नवीन सभी विषयों का सम्यक अध्ययन कराया जाये।

गुरुकुलों में बच्चों को दुग्ध-फल व भक्ष्य कोटि का शुद्ध शाकाहारी भोजन कराया जाता है। मांसाहार, मद्य, अण्डा, धूमपान आदि व्यसनों का गुरुकुल शिक्षा एवं वैदिक जीवन में सर्वथा निषेध है। ब्रह्मचारी व्यायाम करते हैं एवं इसके साथ योगाभ्यास भी करते है। सभी प्रकार की खेल-क्रीडाओं व जूडो-कराटे, सूटिंग आदि का प्रशिक्षण भी दिया जाता है। कलाबाजी या जिमानस्टिक की शिक्षा की भी व्यवस्था की जाती है। इससे बालक का शरीर पुष्ट व बलवान होता है। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन, बुद्धि व आत्मा हो सकते हैं। अतः गुरुकुल का बालक या ब्रह्मचारी बौद्धिक दृष्टि से अधिक सक्षम होता है और सभी विषयों को सरलता से ग्रहण कर सकता है। यदि गुरुकुल में रहकर बच्चे कक्षा 12 या इण्टर तक की भी शिक्षा प्राप्त कर लें तो उनकी बुनियाद सुदृण हो जाती है और इसके बाद वह आधुनिक शिक्षा के केन्द्रों में अध्ययन कर व्यवसायिक विषयों की शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। देहरादून की पश्चिमी दिशा में पौंधा नामक ग्राम में एक गुरूकुल है जहां बालक व युवक प्राचीन गुरुकुलीय शिक्षा पद्धति से अध्ययन कर रहें हैं। यहां ब्रह्मचारी रवीन्द्र तथा ब्रह्मचारी अजीत आदि अनेक युवकों ने अध्ययन किया है और सम्प्रति वह सफल जीवन की ओर अग्रसर हैं। श्री रवीन्द्र एक महाविद्यालय में प्रवक्ता हैं। उनका व्यक्तित्व प्राचीन व आधुनिक जीवन पद्धति का सम्मिश्रण है जो अन्यतम है। श्री अजीत भी एक प्रतिभाशाली युवक हैं। वह स्नात्कोत्तर शिक्षा पूरी करने के बाद आगे का अध्ययन कर रहे हैं। बहुत ही ओजस्वी वक्ता हैं एवं भव्य व्यक्तित्व के धनी है। इसके साथ वह स्वाभिमानी हैं एवं आत्म विश्वास के धनी है। ऐसे ही अन्य ब्रह्मचारी, विद्यार्थी व युवक गुरुकुल में हैं। आज की आधुनिक व प्राचीन शिक्षा की सभी विशेषताओं को लेकर गुरुकुल को नया स्वरूप प्रदान कर गुरुकुल से इच्छित लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं, ऐसा हमारा अनुमान व विश्वास है।

हम देखते हैं कि एक ही विद्यालय के सभी विद्यार्थियों की योग्यता समान नहीं होती। कई बहुत मेधावी व पढ़ाये जाने वाले विषयों को पूरी तरह ग्रहण कर लेते हैं तो बहुत से नहीं कर पाते। अध्ययन में अनेक बातें काम करती हैं। अध्यापकों के गुणी व योग्य होने के साथ स्कूल प्रशासन, बच्चे का स्वयं का पुरुषार्थ, बच्चे के पूर्व जन्म व इस जन्म के संस्कार व इस जन्म की पारिवारिक पृःठभूमि व परिवेश आदि अनेक कारण होते हैं। ऐसा ही गुरुकुल में भी होता है। आज देश भर में गुरूकुलों की संख्या तो बहुत है परन्तु सरकारी सहायता प्राप्त न होना, साधनों का अभाव, अच्छे भवन, यन्त्र, उपकरण की अपर्याप्त व्यवस्था, शिक्षा व पाठ्य सामग्री की कमी और आचार्यो के उचित वेतन व उनके सम्मान आदि की समुचित व्यवस्था में त्रुटियों के होने के साथ-साथ अनेक गुरूकुल के संचालकों में शिक्षा के प्रति दूरदर्शिता व आधुनिक अच्छी बातों को अपनाने का अभाव जैसी प्रवृत्तियां भी होती हैं जिससे गुरुकुल के विद्यार्थियों के विकास व उन्नति में कुछ बाधायें आती हैं। यदि आज सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों को गुरुकुल का रूप देते हुए उन्हें आवासीय शिक्षणालय बनाकर वहां प्रातः सायं सन्ध्या, अग्निहोत्र के साथ वैदिक आर्ष व्याकरण व इतर वैदिक आर्ष ग्रन्थों यथा सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, मनुस्मृति, उपनिषद्, दर्शन व वेद आदि का अध्ययन अन्य सामान्य गणित, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान आदि के साथ कराया जाये तो परिणाम अच्छे हो सकते हैं। हमने अनुभव किया है कि बड़े-बड़े पदों पर प्रतिष्ठित, बहुशिक्षित व पठित व्यक्तियों के जीवन भी अध्यात्म व चारित्रिक दृष्टि से अत्यन्त दुर्बल, अपूर्ण व शून्य प्रायः हैं। उनमें प्राचीन वेद कालीन भारतीय संस्कृति का न तो यथोचित ज्ञान है और न उसका गौरव। अंग्रेजी के कुछ ग्रन्थों को पढ़कर उसके अन्धभक्त होकर वह स्वयं को विद्वान, अधिकारी व ज्ञानी होने का दम्भ करते हैं। ऐसे लोगों में देश के दुर्बल, अशिक्षित, निर्धन, भोले भाले लोगों के प्रति सहानुभूति व संवेदनाओं का भी अभाव पाया जाता है।

महर्षि दयानन्द ने 'मनुष्य' की परिभाषा की है। वह लिखते हैं कि 'मनुष्य उसी को कहना कि जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्ममात्माओं की चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुणरहित क्यों न हों - उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती, सनाथ, महाबलवान् और गुणवान भी हो तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारूण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें, परन्तु इस मनुष्यपनरूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।' मनुष्य की यह परिभाषा संसार के साहित्य मे अपूर्व है एवं पूरी तरह से स्वामी दयानन्द के जीवन में चरितार्थ हुई देखी जा सकती है। आज इस परिभाषा को अपने जीवनों मे चरितार्थ करने वाले लोगों का अभाव है। ऐसा मनुष्य केवल वैदिक गुरुकुल में ही बन सकता है, स्कूली शिक्षा में इसलिये नहीं कि वहां तो विद्यार्थी का उद्देश्य धनोपार्जन व सुख-सम्पत्ति से युक्त आरामदायक जीवन व्यतीत करना है। राम, कृष्ण, पंतजलि, गौतम, कणाद, कपिल, वेदव्यास, शंकर, चाणक्य आदि गुरुकुल शिक्षा पद्धति की ही देन थे और हम यह कह सकते हैं कि उनमें यह परिभाषा ठीक-ठीक व प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होती थी। हमारे देश के क्रान्तिकारी चन्द्रशेखर आजाद, रामप्रसाद बिस्मिल, भगत सिंह, सुखदेव, राजगुरु, अशफाक उल्ला खां, रोशन सिंह व लाहिड़ी, खुदीराम बोस, योगी अरविन्द एवं ऐतिहासिक पुरुष वीर शिवाजी, महाराणा प्रताप व गुरु गोविन्द सिंह आदि इस परिभाषा को अपने जीवन में चरितार्थ करते थे। इन महान विभूतियों ने देश, धर्म व संस्कृति की रक्षा के लिए जो कष्ट सहे, वह स्वतन्त्र भारत के बड़े से बड़े किसी नेता व व्यक्ति ने नहीं सहे। वस्तुतः इन्होंने भी 'मनुष्य' की परिभाषा को सर्वांश में अपने जीवनों में चरितार्थ किया था। स्वामी श्रद्धानन्द ने महर्षि दयानन्द से प्रेरणा पाकर कांगड़ी, हरिद्वार में सन् 1902 में जो गुरुकुल खोला था उसका इतिहास भी स्वर्णिम हैं। वहां भी देशभक्त विद्वान, अध्यापक, उपदेशक, वेद भाष्यकार, इतिहासकार, चिकित्सक व वैद्य, पत्रकार व स्वतन्त्रता सेनानी उत्पन्न हुए जिन्होंने वेदों के आधार पर महर्षि दयानन्द द्वारा दी गई परिभाषा को अपने जीवन में चरितार्थ किया था। हमें विश्वास है कि भविष्य में गुरुकुल शिक्षा पद्धति श्रेष्ठ सिद्ध होगी और सारी दुनियां में शिक्षा के सभी उद्देश्यों को पूरा करने के कारण इसे अपनाया जायेगा।

- मनमोहन कुमार आर्य
पताः 196 चुक्खूवाला-2, देहरादून-248001
दूरभाषः 09412985121

ओ३म्

ओ३म् भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं । भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ।।

अस्मिन यज्ञे विश्रयन्तामृतावृधः (सत्य के प्रचारक, सत्य की रक्षा करने वाले देव इस यज्ञ में उपस्थित हों।)

प्रियं देवानामप्येतु पाथः– यज्ञकर्ताओं को देवों का प्रिय स्थान प्राप्त हों।

दयानन्द मठ चम्बा का 38वाँ वार्षिकोत्सव एवं 18वें दुर्लभ शारद यज्ञ की पूर्व सूचना

मेरे प्रिय आत्मीयजनो व धर्मधुरी, धर्मप्रेमी सज्जनों, आज समाज में, राष्ट्र में, राष्ट्र में ही क्या, समस्त संसार में जो उथल-पुथल हो रही है, प्राकृतिक आपदाएं आ रही हैं, अतिवृष्टि व अनावृष्टि के कारण जो भयंकर तबाही हो रही है,उससे चारो ओर भय का वातावरण बन रहा है। विभिन्न प्रकार की बीमारियाँ मनुष्य को, समाज को जकड़ती जा रही हैं। हवा दूषित, पानी दूषित, मन दूषित, विचार दूषित, खान-पान दूषित, चारों ओर सारा का सारा वातावरण ही दूषित दर दूषित होता जा रहा है। लूटपाट, चोरी, डकैती, मारकाट, बलात्कार, व्यभिचार, अत्याचार, तथा विभिन्न प्रकार के दुर्घटनाओं के कारण जनित-चीत्कार हाहाकार, की वीभत्स ध्वनियों के कारण उत्पन्न ध्वनि प्रदूषण से द्युलोक, अन्तरिक्ष लोक, पृथ्वी लोक, व्याप्त होते जा रहे हैं, जिसके कारण अशान्ति, बेचैनी, भय व आशंकाओं में आम आदमी जीने को मजबूर है। न रात को नींद है, न दिन को चैन है। अधिक क्या लिखूं आप सभी इन सब बातों के प्रत्यक्षभोक्ता व प्रत्यक्षद्रष्टा हो। सभी लोग इन समस्याओं से छुटकारा पाना चाहते हैं पर इसका उपाय क्या है? शास्त्रों के अनुसार इन सबसे छुटकारा पाने का एक ही उपाय है और वह है यज्ञ। यज्ञ ही वह एक उपाय है, यज्ञ ही वह कर्म है, जिसके सम्पादन से सभी समस्याओं से छुटकारा पाया जा सकता है। नान्य पन्थाःविद्यतेऽनाय इसके अलावा इनसे छुटकारा पाने का न कोई उपाय है न कोई उपचार।

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः यज्ञ के अलावा सभी कर्म बन्धनों में डालने वाले हैं। इसलिए हे बन्धुजनों तदर्थं मुक्तसंगसमाचरथ आओ अन्य कर्मों में आसक्ति को छोड़ इस यज्ञ कर्म को अपनाकर समाज के प्रति, राष्ट्र के प्रति, अपनों तथा अपने प्रति हमारा जो कर्तव्य बनता है, उसे निभाते हुए, पाप, ताप, संतापों, से छुटकारा पाकर अग्निदेव से प्रार्थना करें। यज्ञ में उपस्थित सभी देवों से प्रार्थना करें यत्रब्रह्मविदो यान्ति दीक्षया तपसासह दीक्षा व तप के साथ जहां जिस लोक में ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मवेता ऋषि, महर्षि लोग जाते हैं। हे अग्नि देव, हे वायु देव, हे सूर्य देव, हे चन्द्रदेव, हे सोमदेव, हे इन्द्रदेव, हे जलदेव, हे यज्ञ में उपस्थित समस्त देवों, हे ब्रह्म देव हमें भी उन लोकों को प्राप्त कराओं। बन्धुजनों यज्ञों का वह प्रकार, यज्ञों की वह विधा पूज्य चरणों ने वेदों से लेकर हमारे सामने उपस्थित कर दी हैं। जिन में से यह दुर्लभ शारद यज्ञ भी एक है। जो व्यय साध्य है, कष्ट साध्य हैं परन्तु सर्वविध कल्याणकारी हैं। इस यज्ञ को तन, मन, धन, सब प्रकार से सफलतापूर्वक सम्पन्न करने के लिए एक बार पुनः आप लोगों से आवेदन, निवेदन करने के लिए उपस्थित हुआ हूँ। इसकी पूर्व सूचना आप लोगों को दे रहा हूँ ताकि आप लोग इसके लिए पहले से ही सजग व तैयार रहें। इसमें कौन भजनीक आ रहें हैं?, कौन विद्वान, सन्यासी व उपदेशक आ रहें हैं?, इस जिज्ञासा से परे हटकर केवल व केवल यज्ञ की ही जिज्ञासा, यज्ञ की ही पिपासा लेकर आप लोग आने का मन बनाएं। विशेष आमन्त्रित विद्वान, सन्यासी व भजनीक इनमें कोई नहीं हैं। आमन्त्रित करने पर न आए, नाम छपने पर भी दगा दे जाए जो मिथ्यावादिता के दोष से हमारा यज्ञ पहले ही दूषित हो जाएगा। इसलिए सूचना दे रहें हैं यह सूचना सभी के लिए हैं। विद्वानों, सन्यासियों, उपदेशकों, महोपदेशकों सभी के लिए है। इनमें से जो भी आ जाऐंगें यज्ञ में उन सबका स्वागत हैं। यथा सामर्थ्य मार्ग व्यय आदि से उन्हें सम्मानित भी करेंगें। पूज्य स्वामी आर्यवेश जी, पूज्य स्वामी सवितानन्द जी इस यज्ञ के मुखिया हैं ही। संस्था के संरक्षक भी हैं। इन्हीं महामनीषियों, त्यागी, तपस्वी, सन्तों के दिशा-निर्देश में, इनसे प्राप्त आशीर्वाद से हमारे सब कार्य चल रहे हैं व उनके द्वारा दी गई शाबासी से उत्साहित हो, मैं आगे बढ़ पा रहा हूं, और इन सब कार्यो को करने में सक्षम हो पा रहा हूँ। पूज्य चरणों की, दिव्यजनों व दिव्यात्माओं की छत्रछाया तो हरदम हम पर बनी हुई है। आप सभी का सहयोग भी हरदम बना रहता है। बस हम सबने यज्ञ का ही माहौल, यज्ञ का ही वातावरण बनाना है। भजनीक के रूप

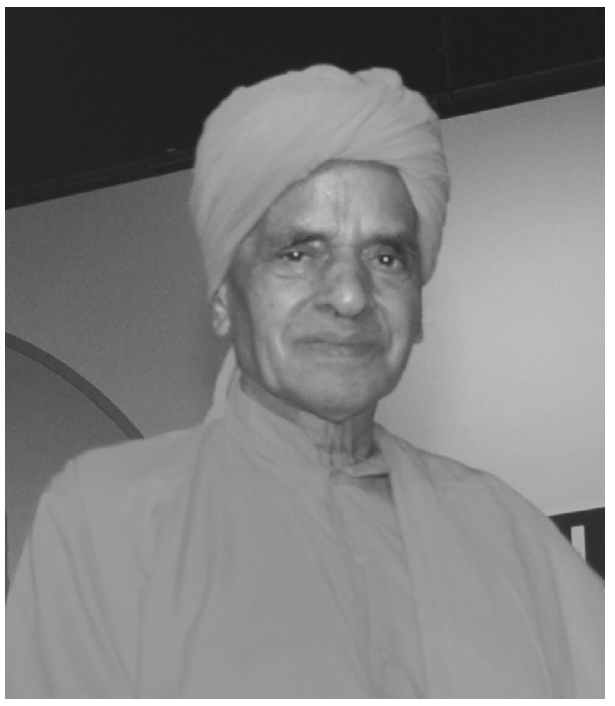

में श्री संदीप आर्य जी, मेरी धर्मपत्नी श्रीमती सरस्वती देवी, विद्यालय की संगीत विषय की अध्यापिका एवं छात्राएं, प्रिय बेटे रमेश की पत्नी नीतू व हेमराज आदि लोग हैं। ये सभी बीच-बीच में संगीत की स्वर लहरियों से भी यज्ञ के वातावरण को मोहक व आह्लादकारी बनाऐंगें। विद्वानों व सन्यासियों के द्वारा वेद विषय को तथा यज्ञ विषय को भी सरल, सोमरस बना पिलाया जाएगा। आप सभी कुछ समय के लिए अपने शेष कार्यो को, दुनियादारी के झमेलों को छोड़ कर इस अलौकिक वातावरण में प्रवेश कर स्वर्गीय आनन्द का उपभोग करने के लिए अवश्य आएं। आओगे तो आगे भी इच्छा बनेगी, और चाह बढ़ेगी, कवि के शब्दों में अमृत झरना झरता हैं इसे पीके अमर हो जाओ रे-किमधिकम्

कार्यक्रम

7 अक्टूबर से 9 अक्टूबर 2018 तक मठ का वार्षिक उत्सव मनाया जाएगा, जिसमें प्रातः 6 बजे से 10 बजे तक यज्ञ, भजन व प्रवचन होंगें। क्योंकि चम्बा में गुरुकुल बन्द हो गया है। लोगों के मन में यह धारणा घर कर गई है और इसका प्रचार भी जोरों से हुआ। उसे दूर करने के लिए गुरुकुलों में जो गतिविधियां होती हैं, जो संस्कार दिए जाते हैं, उनकी झाकियां गुरुकुल में निवास करने वाले छात्रों द्वारा एवं महर्षि दयानन्द आदर्श विद्यालय के छात्रों-छात्राओं द्वारा, 11 बजे से 3.30 बजे तक प्रस्तुत की जाएंगी।

सायं-- 4 से 7 बजे तक पुनः यज्ञ व भजन प्रवचन

यह क्रम 9 अक्टूबर 2018 तक चलेगा।

दुर्लभ शारद यज्ञ

10 अक्टूबर 2018 को प्रातः 6.30 बजे से देवों पितरों के साथ-साथ, आप सभी दिव्यात्माओं के साथ मिल बैठकर-परमपिता परमात्मा का आशीर्वाद ले, पूज्य चरणों की छाया में दुर्लभ शारद यज्ञ आरम्भ हो जाएगा, जो कि पूरे दिन व पूरी रात निरन्तर चलेगा। अहः अक्तुं यज्ञम् ऋग्वेद का आदेश है, और 11 अक्तूबर प्रातः 10 बजे इसकी पूर्णाहुति होगी, मैंने- समय सारणीपूर्वक पूर्व सूचना देकर अपना फर्ज, अपना कर्तव्य निभा दिया है, आगे भी निभाऊंगा। अब आप लोगों की बारी है। अतः अभी से तैयारियां शुरु कर दें। इस सौभाग्यशाली अवसर पर यदि कोई यज्ञमान बनना चाहता हो तो पूर्व सूचना दे दें। अन्न, धन, मन व तन से अधिकाधिक रुप से इस महायज्ञ में सहयोग दे कर पुण्यार्जन करें। भगवान कृष्ण कहते हैं- यज्ञदान, तपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेवतत् यज्ञ करना, तप करना और दान देना इन तीन कर्मो को मनुष्य को कभी नहीं छोड़ना चाहिए। इन्हें निरन्तर करते रहना चाहिए क्योंकि यह तीनों कर्म मनीषियों को भवसागर से पार कराने वाले पवित्र कर्म हैं। पावमानि मनीषिणाम् ऋग्वेद के सातवें मण्डल के छियासठवें सूक्त के ग्यारहवें मंत्र में निर्दिष्ट इस दुर्लभ शारद यज्ञ में यह तीनों ही कर्म एक साथ सम्पन्न हो जाते हैं। यह कष्ट साध्य है, इसे सम्पन्न करने के लिए तप, करना पड़ता है। यह प्रचुर दान से सिद्ध होता है। इस यज्ञ के लिए दिया गया दान ददाति परमम् सौरव्यम् इहलोके परत्र च इहलोक में भी तथा यहां से जाने के बाद परलोक में भी अपार सुखों को देता है क्योंकि यह दान- पात्रे विधिवत् प्रति पादितम्- योग्य स्थान पर सर्वहित कार्य के लिए दिया गया है। इसलिए इस अवसर का लाभ उठाएं। ईश्वर सबका कल्याण करे।

सुविधाओं के लिए- यदि आप लोगों में से किसी के मन में दान देने की अभिलाषा उपजती हो तो उसकी सुविधा के लिए मठ खाता न0 नीचे दे रहा हूँ। मठ को दिया गया दान ए. टी. जी. के दायरे में आता है।

दयानन्द मठ चम्बा

भारतीय स्टेट बैंक चम्बा

खाता न. -11149833806

IFSC NO-SBIN0000626,

CIF NO-80932484893

खाते में राशि जमा करने के बाद- 098050-22871 अथवा 01899-222871 इन नम्बरों में से किसी एक पर सूचना अवश्य दे दें ताकि रसीद भेजने में आसानी रहेगी।

- सूचक व निवेदक

आचार्य महावीर सिंह, अध्यक्ष, दयानन्द मठ चम्बा

हि. प्र.-176310

वेद श्रावणी उपाकर्म का महत्त्व

– पं. नन्दलाल निर्भय सिद्धान्ताचार्य

वेद–श्रावणी उपाकर्म है, पर्व सुपावन सुखकारी,
महापर्व का महत्त्व समझलो, जागो, जग के नर–नारी।।
श्रावण मास पूर्णिमा को यह, पर्व मनाया जाता है।
इसे सलोना भी कहते है, ब्राह्मण पर्व कहाता है।।
आर्यों का यह विमल पर्व रक्षाबंधन कहलाता है।
वेद श्रावणी उपाकर्म को, सारा जगत मनाता है।।
अच्छी तरह मनाओ इसको, सुख पाओगे तुम भारी।
महापर्व का महत्त्व समझ लो, जागो, जग के नर–नारी।।1।।
ऋषियों–मुनियों–विद्वानों ने, इसको श्रेष्ठ बताया है।
वेद पढ़ो औरों को पढ़ाओ, दुनिया को समझाया है।।
बनो तपस्वी वेदाचारी, त्याग मार्ग दर्शाया है।
वैदिक कवि गायकों ने भी, इसका ही गुण गाया है।।
आर्यवर्त के गुण गाती थी, किसी समय जगती सारी।
महापर्व का महत्त्व समझ लो, जागो जग के नर–नारी।।2।।
अविद्या रूपी अन्धकार में, भूमण्डल को घेरा है।
ढोंगी, पाखण्डी, गुंडों ने, आकर डाला डेरा है।।
गुरुडम बढ़ा रहे हैं, ठगियाओं का यहाँ बसेरा है।
धर्म द्रोही, पोंगा पंथी, लगा रहे नित फेरा हैं।।
खाओ–पियो मौज उड़ाओ, कहते हैं भ्रष्टाचारी।
महापर्व का महत्त्व समझ लो, जागो जग के नर–नारी।।3।।
बहनें भी अब भ्राताओं को, देखो राखी बाँध रही हैं।
बदले में धन माँग रही हैं, पगली मौका साध रही हैं।।
भारत की ललनाओं जागो, तुम भी लालच त्यागो री।
धर्म की रक्षा करने का व्रत, माताओं से मांगो री।।
कौशल्या, सीता जैसी तुम, बन जाओ अब महतारी।
महापर्व का महत्त्व समझ लो, जागो जग के नर–नारी।।4।।
जागो पूज्य ब्राह्मणो जागो, निज कर्त्तव्य निभाओ तुम।
गौतम, कपिल, कणाद बनो तुम, त्याग भाव दर्शाओ तुम।।
करो वेद प्रचार जगत में, सोया जगत जगाओ तुम।
जगत गुरु दयानन्द बनो तुम, जग में धूम मचाओ तुम।।
नन्दलाल निर्भय बन जाओ, परशुराम सम तपधारी।
महापर्व का महत्त्व समझ लो, जागो जग के नर–नारी।।5।।

– आर्य सदन, बहीन, जनपद–पलवल, हरियाणा
मो.:–9813845774

सोम का न्याय

– स्वामी विवेकानन्द सरस्वती

वेदों, शास्त्रों, स्मृतियों, इतिहासों, आख्यानों, उपाख्यानों, कथाओं तथा अन्य संस्कृत साहित्यों का अवधानपूर्वक आलोडन–विलोडन तथा परिशीलन करने के पश्चात् यही निष्कर्ष निकलता है कि जिस व्यवहार से सत्य की रक्षा एवं असत्य का पराभव हो, उसे न्याय कहते हैं। इसी तथ्य को न्यायदर्शन के सुप्रसिद्ध भाष्यकार वात्सायन ने 'प्रमाणैरर्थपरीक्षणं न्यायः' इस प्रकार परिभाषित किया है। प्रमाण के द्वारा किसी तत्त्व का यथार्थ निरूपण, परीक्षण करना न्याय है। अब यहाँ प्रश्न उपस्थित होता है कि यदि प्रमाण इतना विश्वसनीय एवं व्यापक परिमापक है तो पहले यही देखना चाहिए कि प्रमाण क्या वस्तु है? इस विषय में महर्षि गौतम स्वयं अपने न्यायशास्त्र में कहते हैं कि 'प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दाः प्रमाणानि' – (न्याय. 1/1/3)

प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान तथा शब्द ये चार प्रमाण हैं। जिनके द्वारा किसी ज्ञातव्य तत्त्व का परीक्षण परि सर्वतो भाव, ईशन अवलोकन किया जाता है। महर्षि पतंजलि ने भी योगदर्शन में अनुमान के अन्तर्गत ही उपमान का समावेश करते हुए 'प्रत्यक्षानुमानागमाः प्रमाणानि' – (योग 1/7) कहकर तीन प्रमाणों का ही उल्लेख किया है। अस्तु! जो भी हो प्रमाण तीन हों या चार, इतना तो निश्चित है कि प्रमाणों का मुख्य उद्देश्य तत्त्वों का यथार्थ ज्ञान कराना है। इस तत्त्व ज्ञान की अभिलाषा रखने वाले व्यक्ति के निकट दो पक्ष उपस्थित होते हैं। एक 'सत्' तथा दूसरा 'असत्'। इन दोनों में से कौन सा उचित है, इसका निश्चय करने के लिए वह सोम (विद्वान्, राजा या न्यायाधीश) के पास उपस्थित होता है। उस समय सोम दोनों ही पक्षों का सम्यक् परीक्षण करके 'सत्' की रक्षा करता है तथा 'असत्' को मार देता है। ऋग्वेद का यह मंत्र इसी भाव को अभिव्यक्त करता है –

सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय सच्चासच्च वचसी पस्पृधाते।
तयोर्यत्सत्यं यतरदृजीयस्तदित्सोमोऽवति हन्त्यासत्।। – ऋ. 7/104/12

अर्थात् अच्छी प्रकार ज्ञान की तह तक पहुँचे हुए मनुष्य के सामने सत् और असत् दोनों प्रकार के वचन अपना विवाद उपस्थित करते हैं। उनमें से जो सत्य है और यदि दोनों सत्य हैं तो सत्यतर है, सोम उसकी तो रक्षा करता है और असत् को मार गिराता है।

वेद के इस मंत्र में न्याय के चाहे जितने ही अर्थ क्यों न होते हों, उन सबका समावेश कर दिया है। इस सत् की रक्षा और असत् के हनन करने वाले व्यक्ति को न्यायकारी कहा जाता है।

इतिहास में भारत में ही नहीं, अपितु अन्य देशों में भी इस प्रकार के न्यायकारी राजा हुए हैं। इंदौर की महारानी अहिल्याबाई का न्याय प्रसिद्ध है। वह यह कि विधवा महारानी अहिल्याबाई के इकलौते पुत्र ने कुछ ऐसा अपराध कर दिया, जिस अपराध में सामान्य प्रजा को मृत्यु दण्ड दिया जाता था। उस अपराध से युक्त उनका पुत्र जब उनके सम्मुख न्यायार्थ उपस्थित किया गया तो महारानी ने उसके लिए मृत्युदण्ड घोषित कर दिया। मन्त्रियों ने बहुत अनुनय–विनय किया कि राजमाता इस प्रकार के दण्ड से कुल का दीपक बुझ जायेगा। तब राजमाता ने गम्भीर वाणी में कहा – 'कुल का दीपक चाहे बुझ जाए, लेकिन न्याय का दीपक नहीं बुझना चाहिए।' लगभग इसी प्रकार की घटना अरब के खलीफा उमर के साथ भी घटी थी। उनके भी इकलौते पुत्र ने कुछ इसी प्रकार का असदाचरण किया, जिसमें सामान्य प्रजा के अपराधी को सौ कोड़े मारे जाने का दण्ड था। खलीफा उमर ने अपने पुत्र को भी सौ कोड़े मारने का दण्ड दिया।

दण्ड सुनाने के बाद मंत्रियों ने कहा कि बालक कोमल है, दण्ड में न्यूनता की जाए। खलीफा ने लगभग गरजते हुए कहा कि न्याय की तुला जो कहती है, वही होना चाहिए और उनके पुत्र के साथ वही किया गया। कुछ कोड़ों के लगने के पश्चात् पुत्र का देहान्त हो गया। कोड़े लगाने वालों ने कहा कि कोड़ों की संख्या पूर्ण होने से पहले ही कुमार का देहान्त हो गया तो खलीफा ने पुनः दृढ़ता से कहा कि बचे हुए कोड़े उसकी लाश को लगाए जाएँ और ऐसा ही किया गया। इंग्लैण्ड के चतुर्थ हेनरी के युवराज के अभद्र व्यवहार करने पर न्यायाधीश ने युवराज को दण्डित किया। जब इसका समाचार चतुर्थ हेनरी को मिला तो उन्होंने सगर्व कहा कि जिस देश में इस प्रकार के न्यायाधीश हों, वह देश धन्य है।

भारत में तो सम्राट् विक्रमादित्य का न्याय विश्वविश्रुत है। उनकी 'सिंहासन बत्तीसी' की कथा आज भी लोक में चर्चित है। न्याय कैसा हो, इसके प्रतीक के रूप में तुला (तराजू) का चित्र बनाते हैं, जिसका स्पष्ट अर्थ होता है कि न्यायकर्ता की न्यायप्रणाली तुला के डण्डे के समान सीधी होनी चाहिए। चाहे उसमें सोना, चांदी या मिट्टी ही क्यों न तोली जाए। इसी भाव को महाकवि भारवि ने इन शब्दों में व्यक्त किया है –

गुरुपदिष्टेन रिपौ सुतेऽपि वा निहन्ति दण्डेन स धर्मविप्लवम्। – किरात. 1/13

शत्रु या अपना पुत्र कोई भी यदि अधर्माचरण करता है तो निष्पक्ष होकर या तटस्थ होकर उस धर्मविप्लवकारी को दण्डित करना चाहिए।

न्याय के साथ व्यवस्था शब्द सम्बन्धित है। यह व्यवस्था शब्द ही न्याय के फल को प्रकट करता है। इसमें वि+अव+स्था ये तीन शब्द हैं, जिसका सीधा अर्थ है कि कोई भी स्थिति पूर्ण उसी समय मानी जाती है जब वह व्यवस्थित हो। जहाँ न्याय होगा, वहाँ व्यवस्था होगी ही, क्योंकि अन्याय होने पर व्यवस्था तो क्या अव्यवस्था भी नहीं रहती, वहाँ तो होती है भयंकर दुर्व्यवस्था। जिस प्रकार सूर्य के प्रकाश में अन्धकार नहीं रह सकता, उसी प्रकार न्यायरूपी सूर्य की उपस्थिति में अव्यवस्थारूपी अन्धकार नहीं रह सकता।

वेद में न्याय संस्थापन के लिए असत् को मारना अत्यावश्यक बताया है। इसीलिए तो कहा है कि –

सुविज्ञानं चिकितुषे ..... सोमोऽवति हन्त्यासत्।। – ऋ. 7/104/12

इस प्रकरण में इससे पूर्व के मंत्र में भी इसी प्रकार का भाव अभिव्यक्त किया है –

ये पाकशंसं विहरन्त एवैर्ये वा भद्रं दूषयन्ति स्वधाभिः।
अहये वा तान्प्रददातु सोम आ वा दधातु निर्ऋतेरुपस्थे।। – ऋ. 7/104/9

पदार्थ (ये) जो लोग (एवैः) बुरे अभिप्रायों से (पाकशंसम्) परिपक्व, सत्यवचन कहने वाले को (विहरन्ते) विरुद्ध मार्ग में ले जाते हैं (वा) अथवा जो (स्वधाभिः) अपने बल, अन्न, गृह के बल से वा वेतनभोगी पुरुषों द्वारा (भद्रं दूषयन्ति) भले आदमी को दूषित करते हैं। (सोमः) शासक, राजा, न्यायाधीश (तान्) उनको (वा) भी (अहये प्रददातु) सर्पादि जन्तु के काटने वा सर्पवत् कुटिलाचार करने के लिए दण्ड दे। (वा) अथवा (तान्) ऐसे पुरुषों को (निःऋते) दुःखदायी जन्तु सिंह, रीछ आदि वा पीड़क के (उपस्थे) समीप (आदधातु) रक्खे।

इसी सूक्त के 13वें मंत्र में भी सोम को न्याय करने की ही प्रेरणा दी गई है –

न वा उ सोमो वृजिनं हिनोति न क्षत्रियं मिथुया धारयन्तम्।
हन्ति रक्षो हन्त्यासद्वदन्तमुभाविन्द्रस्य प्रसितौ शयाते।। – ऋ. 7/104/13

पदार्थ – (सोमः) उत्तम शासक (वृजिनम्) असत्य को (न वै उ हिनोति) कभी वृद्धि न होने दे और (मिथुया धारयन्तम्) असत्य के धारक (क्षत्रिययम्) बलशाली पुरुष को भी (न हिनोति) न बढ़ने दे। (रक्षः) दुष्ट पुरुष को (हन्ति) दण्ड दे और (असद् वदन्तं हन्ति) असत्यवादी को दण्ड दे। (उभौ) वे दोनों भी (इन्द्रस्य प्रसितौ) दुष्टों के भयकारी पुरुष के उत्तम बन्धन में (शयाते) डाले जाएँ।

वेद में सोम के इस प्रकार के न्याय करने के मिष से शासकों प्रशासकों एवं न्यायाधीशों के लिए न्याय करने का मार्ग निर्दिष्ट किया है। यद्यपि लोक में अन्य भी घटनाएँ न्यायपद वाच्य होती हैं, किन्तु वहाँ न्याय शब्द प्रायः प्रकारार्थवाची होता है। जैसे – घुणाक्षर न्याय, काकतालीय न्याय, ब्राह्मणवशिष्ठ न्याय, मत्स्य न्याय, आरण्यक न्याय, अविरविक न्याय, सीलीपुलाक न्याय, गजनिमीलक न्याय, खलकपोत न्याय, तक्रकौण्डिन्य न्याय, अर्धजरती न्याय, देहलीदीप न्याय, जलतुम्बिका न्याय, अन्धपंडु न्याय, गोवलीवर्द न्याय, दग्धरथाश्व न्याय, अशोकवाटिका न्याय इत्यादि। इनमें से अनेक न्यायों के माध्यम से शास्त्रीय विषयों का समाधान कर शास्त्रीयव्यवस्था स्थापित की जाती है। महर्षि पतंजलि ने तो व्याकरण महाभाष्य में अनेकत्र इनका प्रयोग कर पुचुर मात्रा में शब्द साधुत्व दर्शाया है तथा आचार्य पाणिनि के सूत्रों का औचित्य भी।

' न हाव्यवस्थाकारिणा शास्त्रेण भवतिव्यम्। शास्त्रेण नाम व्यवस्थाकारिणा भवितव्यम्'। – व्याकरणमहाभाष्य – 3/1/11

यहाँ मत्स्यन्याय, आरकण्यकन्याय आदि में न्याय शब्द कहा तो जाता है, किन्तु वक्ता का अभिप्राय केवल यही होता है कि वहाँ 'सद्' और 'असद्' का विचार करके निर्णय नहीं किया जाता, अपितु बलवान् जो चाहता है, वही कर लेता है। यह निन्द्य न्याय है, क्योंकि इस न्याय शब्द के साथ व्यवस्था नहीं है या जो व्यवस्था है, उसे हम व्यवस्था नहीं कह सकते, तथापि इन कथनों से न्यायभास अन्याय पर प्रकाश तो पड़ता ही है। व्यवस्था तो न्याय का फल या सार होती है और यहाँ यह व्यवस्था दिखाई नहीं देती।

– गुरुकुल प्रभात आश्रम, भोलाझाल, मेरठ

वेद अपनाइए–मानवता बचाइए

– डॉ. कृष्णवल्लभ पालीवाल

स्वामी जी की पीड़ा थी कि अज्ञान, सम्प्रदायवाद व धार्मिक अन्धविश्वासों में फंसी मानव जाति को सत्य धर्म का दिग्दर्शन कैसे कराया जाए? उसके लिए उन्होंने विश्व धर्मों के प्रमुख ग्रन्थों को पढ़ा, उनके उद्देश्य व कार्यविधि पर गम्भीरता से मनन किया, और सैकड़ों धर्मशास्त्रों के पढ़ने के बाद वह इस निर्णय पर पहुँचे कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, यह मानव मात्र का पुस्तक है। इसमें मनुष्यों को मोमिनों और काफिरों तथा विश्वासियों और अविश्वासियों के बीच नहीं बाँटा गया है। इनकी शिक्षाओं में पक्षपात, द्वेष व अपना-परायापन नहीं है। वेदों की शिक्षाएँ तो सार्वकालिक, सार्वदेशिक व समस्त मानव मात्र के धर्मग्रन्थ हो सकते हैं, क्योंकि इनमें मानव मात्र की साम्प्रदायिक घृणा, द्वेष व वर्गवाद नहीं है, जैसा कि हम कुरान व बाइबिल में देखते हैं।

यदि महर्षि दयानन्द सरस्वती अन्य अनेक राष्ट्र निर्माणकारी और धर्म रक्षा कार्य न भी करते और केवल इन्हीं शब्दों की पुष्टि में जीवन लगा देते कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है" तो भी वह विश्व मानव कल्याण के उच्च शिखर पर विराजमान होते। मानवता की रक्षा और मानव धर्म में सत्य की स्थापना में उनका स्थान सर्वोच्च होता, क्योंकि यदि हम महर्षि के कार्यकलापों और उनके ग्रन्थों को गम्भीरता से देखें, तो वह कदम-कदम पर सत्य धर्म की स्थापना एवं उसमें मानवीय मूल्यों की रक्षा करते दिखाई देते हैं। जैसा कि उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में लिखा है कि "मेरा इस ग्रन्थ के बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य के सत्य अर्थ का प्रकाश करना है, अर्थात् जो सत्य है, उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादन करना, सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है... क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।" मनुष्य जन्म का होना सत्यासत्य के निर्णय करने कराने के लिए है।" अतः स्वामी जी सत्य धर्म की स्थापना और मनुष्य जाति की उन्नति को अपना जीवन लक्ष्य मानते हैं।

स्वामी जी की पीड़ा थी कि अज्ञान, सम्प्रदायवाद व धार्मिक अन्धविश्वासों में फंसी मानव जाति को सत्य धर्म का दिग्दर्शन कैसे कराया जाए? उसके लिए उन्होंने विश्व धर्मों के प्रमुख ग्रन्थों को पढ़ा, उनके उद्देश्य व कार्यविधि पर गम्भीरता से मनन किया, और सैकड़ों धर्मशास्त्रों के पढ़ने के बाद वह इस निर्णय पर पहुँचे कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, यह मानव मात्र का पुस्तक है। इसमें मनुष्यों को मोमिनों और काफिरों तथा विश्वासियों और अविश्वासियों के बीच नहीं बाँटा गया है। इनकी शिक्षाओं में पक्षपात, द्वेष व अपना-परायापन नहीं है। वेदों की शिक्षाएँ तो सार्वकालिक, सार्वदेशिक व समस्त मानव मात्र के धर्मग्रन्थ हो सकते हैं, क्योंकि इनमें मानव मात्र की साम्प्रदायिक घृणा, द्वेष व वर्गवाद नहीं है, जैसा कि हम कुरान व बाइबिल में देखते हैं।

इसीलिए सभी प्राचीन आर्ष ग्रन्थों ने वेदों को प्रामाणिक धर्म ग्रन्थ माना है। ब्राह्मण ग्रन्थों, उपनिषदों, स्मृतियों, पुराणों व अन्य अर्वाचीन ग्रन्थों में वेदों को प्रामाणिक धर्मगन्थ माना है।" धर्म के जिज्ञासुओं के लिए वेद परम प्रमाण हैं" (मनु. 2,3)। "लोग वेदों के अनुसार अपने-अपने धर्म का पालन करें" (मनु. 2.8)। 'वेद से बढ़कर कोई धर्मशास्त्र नहीं है ' (अत्रिस्मृति)। इसीलिए महर्षि ने वेदों की सत्यता, निष्पक्षता, उदात्तता व मानवता के कारण मानवमात्र को उन्हें पढ़ने-पढ़ाने को परमधर्म निर्धारित किया है।

वेदभाष्य

इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए देववाणी में विद्यमान वेदों का उन्होंने भाष्य किया तथा वेदों के रहस्यों को समझने के लिए वेद भाष्य परम्परा के सूत्र ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में स्थापित किए। यह मानव जाति का दुर्भाग्य है कि वह चारों वेदों का भाष्य सम्पूर्ण न कर सके, मगर उनके अनुयायियों ने वह कार्य अपनी-अपनी योग्यता, क्षमता, दृष्टि व शिक्षा-दीक्षा के अनुसार पूरा किया। परिणामस्वरूप आज चारों वेदों के भाष्य हिन्दी व अंग्रेजी व कुछ अन्य प्रान्तीय भाषाओं में मिलते हैं।

वास्तविक स्थिति क्या है?

महर्षि दयानन्द के वेद भाष्य ने धार्मिक जगत् में एक क्रान्ति ला दी, मानवता को नया स्वरूप प्रदान किया। शक्ति, निर्माण, आत्मविश्वास और पुरुषार्थ की नवीन लहर संचारित की। उन्होंने मानव मात्र को भाग्यवादी व पोपवादी व कठमुल्ला अरबी संस्कृति से मुक्ति दिलाने के लिए एक अद्वितीय प्रेरणा स्रोत वेद विश्व मानव मात्र के सामने रखा, जिसका निष्पक्ष विचारकों, दार्शनिकों ने देश-विदेश की सीमाओं को लांघकर स्वागत किया। मगर इतना होते हुए भी मानव मात्र में तो क्या आज स्वयं आर्य समाज में भी वेद प्रचार की लहर अपेक्षाकृत कम है। सार्वदेशिक, प्रान्तीय एवं पाँच हजार के करीब आर्य समाजों के होते हुए भी आम जनता में वेद प्रचार की पहुँच कम है।

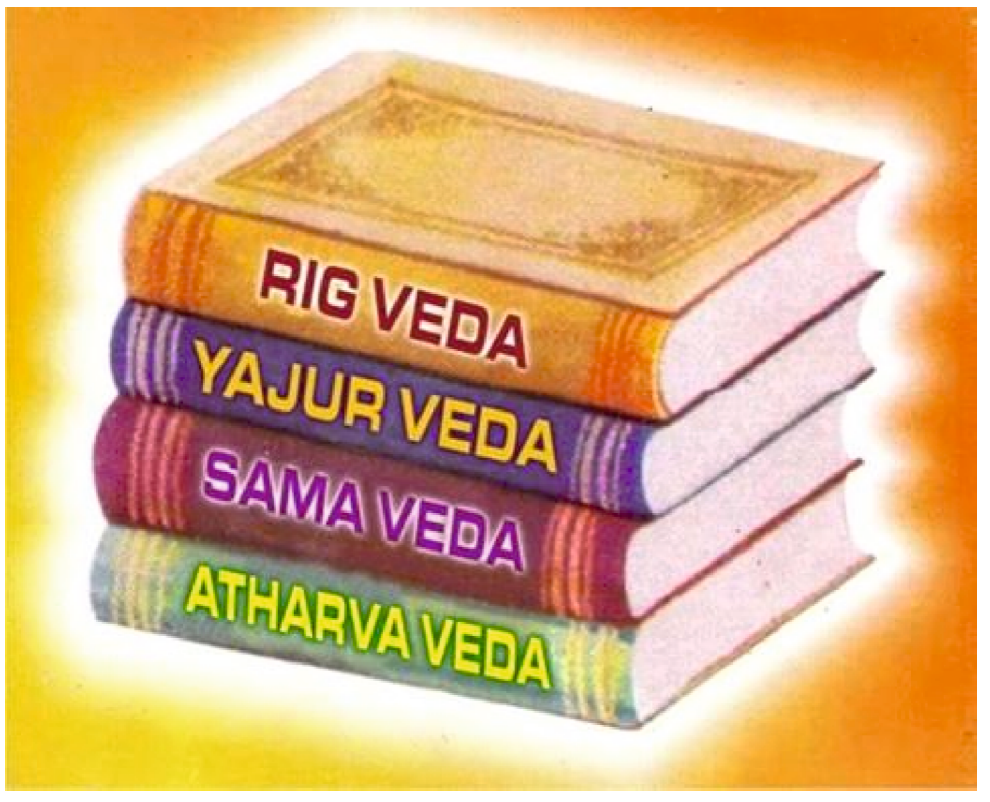

इस शिथिलता के कई व्यावहारिक कारण हैं। पहला, आर्य समाज के अनुयायियों की संख्या कम है। दूसरा अन्य सभ्भी हिन्दू धर्माचार्य वेदों को हिन्दू धर्म का आदि स्रोत मानते हुए भी गीता, पुराण, भागवत व उपनिषदों की मिलीजुली बात करते हैं, वेदों की नहीं, क्योंकि वेदों तक उनकी पहुँच भी नहीं है। तीसरा, वेदों की शिक्षाएँ अथवा उनका स्वरूप कथानक व रामायण महाभारत की तरह ऐतिहासिक कथा न होने के कारण नीरस, शुष्क व गम्भीर हैं। चौथे, चारों वेदों का हिन्दी/अंग्रेजी व प्रान्तीय भाषाओं में भाष्य एक जिल्द में न होना भी वेद प्रचार की प्रगति में बाधक है। पाँचवें, विभिन्न आय वर्ग के लोगों के लिए सरल, क्षेत्रीय भाषा में व्यावहारिक मन्त्रों की छोटी-छोटी पुस्तकें नहीं नहीं हैं। सातवें, वेदों के सूक्त किसी विशेष क्रम में नहीं होने के कारण वेदों की शिक्षाएँ विषयानुसार नहीं हैं, जिससे पाठक भटक जाता है।

फिर क्या करें?

सबसे पहली आवश्यकता है कि वेद प्रचार को विश्वव्यापी बनाने के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय, वेद अनुसंधान संस्थान स्थापित करें, जिसमें विभिन्न विभाग हों, जो कि सरकारी नियन्त्रण से मुक्त हो। फिर उसमें उपरोक्त समस्याओं के निराकरण के लिए कार्य किया जाए।

एक प्रमाणिक भाष्य बनने पर उसके अंग्रेजी व क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद किए जाएँ और उसे एक जिल्द में प्रकाशित किया जाए, जो कि आज के पतले कागज की उपलब्धि व कम्प्यूटर तकनीक के होते हुए सभी बीस हजार मन्त्रों को एक जिल्द में सामान्य मूल्य पर दिया जा सकता है। क्या यह हमारे लिए लज्जा की बात नहीं है कि हमारा धर्मग्रन्थ एक जिल्द में हमारे ही घर में नहीं है, जबकि बाइबिल व कुरान की करोड़ों प्रतियाँ विभिन्न आकार-प्रकारों में मिलती हैं। मेरे विचार से न विद्वानों की कमी है और न साधनों की। यदि कोई कारण है तो संस्थाओं के कर्ताधर्ताओं की उपेक्षा। यदि सभाएँ नहीं करना चाहती, तो वेद प्रेमी व धनाढ्य बन्धु अपना संगठन बनाकर इस मानव हितकारी कार्य को अपने हाथ में लें और अपने प्राणप्रिय धर्म की पोथी कम से कम मूल्य पर मानव मात्र के हाथ में पहुँचावें। यह न केवल धर्म प्रचार बल्कि मानवता की रक्षा का कार्य है, क्योंकि पिछले दो हजार वर्षों के ईसाइयत के खून खराबे से सारा यूरोप तबाह हो गया। उन्होंने पोप को त्याग दिया, जो कि अब भारत के ईसाईकरण में लगा है। उसी की पूर्ति के लिए ओपस जी नामक संस्था विभिन्न रूपों में कार्य कर रही है।

इस्लाम का तालिबानी आतंकवाद विश्वविख्यात है। भारत सहित अनेक देशों में इस्लामी आतंकवाद एक समस्या है। आज भारत के हिन्दू ही नहीं, विश्व के निष्पक्ष मानवतावादी विद्वान् इस धार्मिक कट्टरता से परेशान हैं। वे तो वेदों के सार्वदेशिक सार्वकालिक मानव कल्याण सन्देश व व्यवहार की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

ज्ञान के आदान-प्रदान की सीमाएँ समाप्त हो गई हैं। वेदों का ज्ञान सर्वत्र सुलभ है, जिसने सिद्ध कर दिया है कि वेदों की शिक्षाएँ संकुचित, विघटनकारी, विभेदकारी, आतंकवादी और अशांतिकारक न होकर प्रगतिशील, रचनात्मक, मानवतावादी एवं मानव मात्र को जोड़ने वाली हैं, तोड़ने वाली नहीं है। इनमें धर्म के नाम पर जिहाद या क्रूसेड का आह्वान नहीं है। मानवता की मंगलकामना ही वेदों का एकमात्र लक्ष्य है। पिछले हजारों वर्षों के इतिहास से स्पष्ट है कि वेदानुयायियों ने किसी देश पर अपना धर्म मनवाने के लिए चढ़ाई व हत्याएँ नहीं की हैं, जैसा कि हम इस्लाम व ईसाइयत के इतिहास में देखते हैं। मगर इस मंगलकारी मानवता रक्षा अभियान का सूत्रपात तो आर्यसमाज को ही तेजी से करना होगा।

व्रतबन्ध अर्थात यज्ञोपवीत

- उपेन्द्र आचार्य

भारतीय जीवन में संस्कारों का विशेष महत्व है और इन संस्कारों के कारण मानव जीवन श्रेष्ठ बनता है और उसका प्रभाव मानवीय जीवन में होता है, परन्तु इन दिनों इन संस्कारों के नाम पर फिजूलखर्ची बढ़ गई है। प्राचीन आर्यों ने ये संस्कार बड़ी ही बुद्धिमत्तापूर्ण किए थे और उन्होंने यह नहीं सोचा था कि ये ही संसकार आगे विकृत हो जायेंगे और आज ये संस्कार व्यवसाय बन गए हैं और आडम्बर छा गया है।

भारतीय जीवन में 16 संस्कार होते हैं - गर्भादान पुंसवन, सीमन्तोनयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्रासन, चूड़ाकर्म, व्रतबन्ध (यज्ञोपवीत) वेदारम्भ, समावर्तन विवाह, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यास और अन्त्येष्टि यह 16 संस्कार करने पर मनुष्य का जीवन एकदम शुद्ध और पवित्र हो जाता है।

चूड़ाकर्म (मुण्डन संस्कार) के पश्चात् माता ही बच्चे को घर में सामान्य ज्ञान देती है और बच्चा कैसे अपने बड़ों का आदर करे यह सिखाया जाता है।

यज्ञोपवीत संस्कार 9वाँ संस्कार है और इसे व्रतबन्धन संस्कार भी कहते हैं, क्योंकि इस संस्कार में तीन व्रतों को लिया जाता है। जिसमें ईश्वर के प्रति निष्ठा तथा प्रकृति ने जो कुछ भी रचना की है उसे स्वच्छ रखते हुए उसके रहस्यों का ज्ञान करे, माता-पिता, आचार्य की सेवा उनके सदुपदेशों को अपने जीवन में उतारना तथा विद्या प्राप्त कर और अपने चिन्तन के द्वारा नये विचार भी समाज को देना। इस प्रकार जीवन में तीन व्रत लेने पड़ते हैं और तीन धागों की ब्रह्मगांठ रहती है अर्थात प्रतिदिन इन तीनों व्रतों का पालन करना और यह व्रत इसलिए लिए जाते हैं कि विद्या प्रारम्भ करने के समय मन में उत्साह जागृत हो।

विद्या प्राप्त करना और व्रतों का पालन करने का अधिकार स्त्रियों को भी होने से उसे भी यज्ञोपवीत धारण का अधिकार है। प्राचीन आर्यों की व्यवस्था में स्त्रियों और बालिकाओं को अलग गुरुकुल में भेजा जाता था जहां पर गुरु भी महिला हुआ करती थीं और उस गुरुकुल में महिलाओं की ही व्यवस्था रहती थी और लड़कों के गुरुकुल में सारी व्यवस्था पुरुष देखते थे। उस समय सहशिक्षा का कोई प्रावधान नहीं था।

प्राचीन समय में विद्वान् लोग बालक को विद्यारम्भ करते समय कपास के धागे का यज्ञोपवीत दिया करते थे और वर्तमान समय में जब बालक पाठशाला को जावे उस समय यह संस्कार करना चाहिए और यह चिन्ह ज्ञान प्राप्त करने वालों का चिन्ह होता है। इसके धारण करने पर बहुत बड़ी जवाबदारी आ जाती है।

प्राचीन समय में यह व्यवस्था थी कि सभी बालकों का यज्ञोपवीत संस्कार किया जाता था और यह विशेष रूप से व्यवस्था थी कि अगर कोई ठीक-ठीक विद्या का सम्पादन नहीं करता था। चाहे वह ब्राह्मण का ही बालक क्यों नहीं होता उसका यज्ञोपवीत छीन लिया जाता था और उसकी अप्रतिष्ठा होती थी। उसी तरह शूद्रादिक उत्तम विद्या सम्पादन कर ब्राह्मणत्व के अधिकारी होकर यज्ञोपवीत धारण करते थे। इस प्रकार की व्यवस्था प्राचीन आर्यों ने कर रखी थी। इस प्रकार प्रत्येक स्त्री-पुरुष को विद्या प्राप्त करने का अधिकार था।

वैसे भी वर्तमान समय में सभी विद्या प्राप्त करते हैं; लेकिन जो विद्या प्राप्त करने में रुचि रखता है उसे ही डिग्री मिलती है बाकी के लोगों को नहीं मिल पाती है और फिर वे लोग चाहें तो व्यापार, धन्धा, चपरासी या सफाई कार्य करें और पढ़ने-लिखने वाले उच्चाधिकारी बनते हैं जिनमें योग्यता होती है बड़े-बड़े पदों राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री तक बन जाते हैं। जिनकी विद्या सम्पादन में रुचि है वे ब्राह्मणत्व को प्राप्त करते हैं। फिर उसी प्रकार उत्तम, मध्यम, कनिष्ठ को वैसे-वैसे यज्ञोपवीत धारण करने पड़ते हैं।

वर्तमान समय में इस संसकार का स्वरूप बदल दिया गया है और आज बड़े-बड़े बच्चे हो जाते हैं और कॉलेज में चले जाते हैं, तब घरवाले यज्ञोपवीत संस्कार करते हैं, जबकि बालक का यज्ञोपवीत संस्कार उस समय करना चाहिए जब वह पाठशाला में जाने योग्य हो जावे या माता-पिता को चाहिए वह जिस दिन बच्चे का नाम स्कूल में लिखवाए उस दिन यह संस्कार कर देना चाहिए जिससे बच्चे में उत्साह की वृद्धि होती है और स्वजनों द्वारा जो उस बालक को दान दिया जाता है वह उसकी पढ़ाई पर खर्च होना चाहिए न कि फालतू आडम्बरों में करना चाहिए। यज्ञोपवीत संस्कार आनन्द का संस्कार है और माता-पिता को कितनी खुशी होती है कि उनका बच्चा स्कूल जाने लगा है और उसे लिखता देख उन्हें अपने पर्वूजों का ध्यान आ जाता है कि उन्होंने जिस प्रकार हमें सुयोग्य बनाया है, हम अपने बच्चों को भी सुयोग्य आचरणवान बनाएं और विद्या का अधिकारी बनाकर पूर्वजों के ऋण से मुक्त हों।

इसी प्रकार 10वाँ संस्कार वेदारम्भ का होता है, जिसमें गुरु या इन दिनों मास्टर बच्चे को अक्षर ज्ञान कराकर समाज की व्यावहारिक बातें बताता है, उसे वेदारम्भ संस्कार ही कहा जा सकता है और 11वीं या 12वीं तक विद्या प्राप्त करने के बाद समावर्तन संसकार कहा जा सकता है; क्योंकि 12वीं पास विद्यार्थी अच्छे-बुरे का ज्ञान प्राप्त कर लेता है और जिन्हें अधिक विद्या प्राप्त करना हो तो कॉलेज आदि में जावें। आज भी देखने में आता है कि 35-36 साल तक पढ़ाई की जाती है, उसी प्रकार प्राचीनकाल में भी वेदज्ञान के रहस्यों को जानने के लिए 40 साल और उससे भी अधिक समय तक पढ़ाई की जाती थी। श्रावणी उपाकर्म इस दिन सभी लोग सामूहिक रूप से अपने-अपने यज्ञोपवीत बदलते हैं और अपने व्रतों में कहां ढील आई है, उस पर भी विचार किया जाता है। साधु-सन्त विद्वान, परिव्राजक सब इन दिनों एक स्थान पर ठहर जाते हैं और अपने उपदेशों से सद्मार्ग दिखाते हैं तथा इस दिन उन विद्वानों के सान्निध्य में यज्ञोपवीत बदले जाते हैं और नये यज्ञोपवीत धारण करते हैं तथा निरन्तर अध्ययन का संकल्प लेते हैं और बारिश के चार माह तक स्वाध्याय करते हैं, चिन्तन-मनन करते हैं।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने बच्चों को संस्कारवान बनाएं, जिस प्रकार एक 50 ग्राम लोहे को सुसंस्कारित कर घड़ी बनाई जाती है और 10 पैसे के लोहे को हजार पांच-सौ में बेचा जाता है, उसी प्रकार संस्कार से बालक और पुरुषों की कीमत बढ़ती है, इसलिए श्रावणी के पर्व पर संकल्प लें कि हम अपने परिवार में उत्पन्न बच्चे को संस्कारवान बनायेंगे।

- जैसलमेर (राजस्थान)

श्रावणी उपाकर्म और रक्षा-बन्धन

- माता राज मेहता

जैसे सूर्य और किरणों का, मेघ और वर्षा का, फूल और सुगन्ध का परस्पर सम्बन्ध है, ठीक उसी प्रकार का सम्बन्ध वैदिक मान्यताओं और पर्वों का है। पर्व किसी भी राष्ट्र की राष्ट्रीयता और संस्कृति की पहचान है, जिन पर किसी भी राष्ट्र की सांस्कृतिक, धार्मिक भित्ति टिकी रहती है।

'वेदोऽखिलो धर्म मूलं' (मनुस्मृति) अर्थात् वेद धर्म का मूल है। 'सुखस्य मूलं धर्मः' (चाणक्य नीति) अर्थात् धर्म सुख का मूल है। इस कारण ऋषि मुनि लोग सृष्टि के आरम्भ से ही वेदानुकूल आचरण करते आए हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने कहा है- वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। (आर्य समाज का तीसरा नियम) कहने का तात्पर्य यह है कि वेद के स्वाध्याय का उपक्रम अर्थात् प्रारम्भ दिन से विशेषतः किया जाता है, उसे उपाकर्म कहते हैं। यह श्रावण मास की पूर्णिमा को होता है। इसी कारण इस पर्व को श्रावणी उपाकर्म कहते हैं।

द्विज (ब्राह्मण) श्रावणी उपाकर्म के दिन ही पुराने यज्ञोपवीत (जनेऊ) उतारकर नए यज्ञोपवीत धारण करते हैं। आगामी श्रावणी उपाकर्म तक के लिए वेदादि सद्शास्त्रों का स्वाध्याय करने के लिए संकल्प धारण करने वालों की पहचान है। वेद में यज्ञोपवीत धारण करने के लिए और यज्ञोपवीत की पवित्रता की महत्ता बताने के लिए निम्न मन्त्र हैंः-

यज्ञोपवीतं परमं पवित्र प्रजापतेर्यत्सहसं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्रयं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीत बलमस्तु तेजः।।

यज्ञोपवीत अधिकार का द्योतक नहीं अपितु कर्त्तव्य का बोधक है। इसके तीन धागे, तीन ऋणों अर्थात् पितृ ऋण, देव-ऋण के द्योतक है। ये हृदय को स्पर्श करता हुआ नीचे की ओर जाता है, तो प्रेम का प्रतीक है। नीचे दाहिनी ओर लगी गांठ कटिबद्धता का चिन्ह है। अभिप्राय यह है कि हम अपने समस्त कर्त्तव्यों का पालन कटिबद्ध होकर प्रेम सहित करें।

मध्यकाल में, श्रावणी उपाकर्म के जिस दिन ब्राह्मण लोग क्षत्रियों एवं अन्य वर्ण के लोगों के हाथ में रक्षा सूत्र बांधते थे, जिससे वे रक्षा सूत्र से प्रेरणा लेकर जीवन को वेदानुकूल मर्यादित बनाएं। विद्या प्रचार-प्रसार के लिए ब्राह्मणों ओर विद्वानों की रक्षा करें। यज्ञ के समय पुरोहित यज्ञमान के हाथ में सूत्र बांधता है, जिसका अभिप्राय यह है कि यजमान यज्ञ की मर्यादा का पालन करें और अपने जीवन को मर्यादित बनाएं।

कालान्तर में समाज व्यवस्था दूषित हो जाने से नारी की मर्यादा पर आघात होने लगे। स्वतन्त्र रूप से यज्ञों और सामाजिक कृत्यों में भाग लेने वाली श्रद्धा की मूर्ति, शसक्त नारी, परतन्त्रता की बेड़ियों और घरों की चारदीवारी में असहाय और अबला बन कर रह गई। अब उसके पास अपनी मर्यादा की रक्षा करने का एक ही तरीका था, रक्षा-सूत्र और अपनी मर्यादा की रक्षा की मांग वह अपने भाई से ही कर सकती थी। अतः ऐसे समय में बहनों ने भाइयों के हाथ में रक्षासूत्र बांधना आरम्भ किया। उसी दिन से श्रावणी उपाकर्म का नाम 'रक्षा-बन्धन' भी पड़ गया।

ऐतिहासिक प्रचलित घटना के अनुसार वीर राणा के वीरगति को प्राप्त होने के पश्चात् पड़ोसी मुस्लिम राजा की आंख राणा की वीरांगना पत्नी कर्मवती और उसके राज्य को हड़पने पर लगी थी। कर्णवती विदुषी होने के साथ दूरदर्शिनी और कुशल राजनीतिज्ञया भी थी। अतः उसने अपने राज्य एवं अपनी मर्यादा की रक्षा हेतु मुगल बादशाह हुमांयु को पत्र के साथ-साथ रक्षा सूत्र भेजा। हुमायुं ने बहिन कर्णवती के रक्षा सूत्र में बंधकर उसके राज्य और मर्यादा का भार अपने ऊपर ले लिया। भले ही वह कर्णवती को जीवित न पा सका। इस घटना से प्रमाणित हो जाता हैकि बहन भाई का इतना पवित्र नाता है कि भाई रक्षा सूत्र में बंधकर कर्त्तव्य पालन के लिए कटिबद्ध हो जाता है, जैसा कहा भी गया है-

भैया कृष्ण भेजती हूँ मैं प्यारी राखी तुमको आज।
कई बार जिसको भेजा है, सजा-सजाकर नूतन साथ।
बोलो सोच समझकर बोलो, क्या राखी बंधावाओगे?
भीर पड़ेगी क्या तुम रक्षा करने दौड़े आओगे?

अतः श्रावणी उपाकर्म रक्षा बन्धन हमें सन्देश देता है कि वेद के स्वाध्याय से विद्या की प्राप्ति, धर्म का ज्ञान और सुख की साधना करना, यज्ञोपवीत से संकल्प शक्ति का विकास करना, कर्त्तव्य पालन के लिए कटिबद्ध होना, रक्षा-सूत्र से प्रेरणा लेकर मर्यादा का पालन करना तथा परस्पर प्रेम में वृद्धि करना है। यही इस पर्व को मनाने का औचित्य है।

- आ. वा. आ. ज्वालापुर

भारतीय संस्कृतिरक्षणे गुरुकुलानां योगदानम्

– डॉ. मंजूनाथ एस.जी.

गतांक से आगे

धर्मप्राधान्यशिक्षा – गुरुकुले धर्मप्राधान्य शिक्षणमासीत्। स्वधर्मेणैव मानवः पशुभयः श्रेष्ठः इत्युच्यते, 'धर्मो हि तेषामधिको विशेषः इति। अत्र धर्मपदेन कश्चन सम्प्रदायविशेषः न विवक्षितः। जगद्धारकाणि अहिंसा–सत्य–अस्तेयादिमूलतत्त्वानि धर्मपदवाच्यानि। तद्यथा 'धारणाद्धर्म इत्याहुः इति। किच्च

धृतिः क्षमा दमोस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधे दशकं धर्मलक्षणम्।।

इत्यादिवचनानि, 'धर्मो विश्वस्य जगत् प्रतिष्ठा' इति श्रुतिविहितं धर्मतत्त्वमनुवदन्ति। तथा द्वेषरागादिशून्यानां सत्पुरुषाणां सदाचारः धर्मः इत्युच्यते। अनेनैहिकी भौतिकी लौकिकी समुन्नतिश्च प्राप्यते। अतोऽच्यते 'यतोऽभ्ययुदय निःश्रेयससिद्धिः स धर्मः इति।

आध्यात्मिकी शिक्षा – आत्मा वा अरे दृष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः इत्यात्मसाक्षात्कारमनूद्य श्रवणमननिदिध्यासनं विधत्ते। जीवनमेतन्न केवलं भोगर्थमेव, अपि त्वात्मोन्नतेः प्रमुखं साधनम्। आध्यात्मिकप्रवृत्त्या जीवनमुत्तम भवति। सर्वत्रैकत्वदर्शनेन न शोकाद्यभिभूतो भवति। यथा श्रुतिः

'ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किच्च जगत्यां जगत्।
यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते।।

उपनिषत्सु गीतायाञ्चध्यात्मिकविचाराः सन्ति। उपनिषदादीनामध्यापनं गुरुकुले भवति, अतः तत्रत्य छात्राणां मनसि आध्यात्मिकी भावना जागर्ति।

सदाचारः – 'आचारः परमो धर्मः', 'वृत्तं यत्नेन संरक्षेद् वित्तमेति च याति च। अक्षीणो वृत्तः क्षीणे वृत्ततस्तु हतो हतः।। इत्यादिवचनानि सदाचारस्य प्रामुख्यं कथयन्ति गुरुकुले छात्राः ब्रह्मचर्यादिव्रतपालनेन सदाचारसम्पन्नाः भवन्ति। 'आचार्यः उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः इति आचार्यशिष्ययोर्घनिष्ठसम्बन्धः श्रूयते। उपनयनसंस्कारेणाचार्यः शिष्यं स्वसमीपमानयति। शिक्षकः शिष्यं त्रिरात्रं स्वगर्भे स्थापयति। रात्रिरज्ञानस्योपलक्षणम्। अन्तःकरणे मलविक्षेपावरणानीति दोषाः भवन्ति। आचार्यः निष्कामकर्मभक्तिज्ञानमार्गैः तान् दोषान्निवारयति।

पुनर्जन्म – 'यज्जन्यं तदनित्यम्' इति न्यायः। गीतायामप्युच्यते – 'जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः ध्रुवं जन्म मृतस्य च इति। तस्मात् पुनर्जन्म निश्चितमस्ति। यः अस्मिञ्जन्मनि यथा कर्म करोति तथा तस्य पुनः जन्म भवति। यथा 'पुण्यो वै पुण्येन कर्मणा पापः पापेन 'शुभैराप्नोति देवत्वं निषिद्धैर्नारकिं तनुम् इति। एतादृशज्ञानं शास्त्राध्ययनेन भवति। शास्त्राध्ययनं गुरुकुले भवति।

धनन्यामोहराहित्यम् – निशुल्कशिक्षणं गुरुकुले भवति। अतः धनतृष्णा तत्रत्व छात्राणां न भवति। यदि धनेनार्जिता विद्या चेत्पुनः तस्य सम्पादनार्थं लोकः यतते।

भक्ति : – गुरुकुले प्रतिदिनं ज्येष्ठान् नमस्कुर्वन्ति। 'मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्य देवो भव, अतिथिदेवे भव। इति मातपित्राचार्यातिथीन् पूजयन्ति। अनने तेषां मनसि भक्तिभावना जागर्ति।

समानता – गुरुकुले समेषां वासः, अध्ययनम्, भोजनम्, स्वाध्यायञ्च समानं भवति। तेन छात्राणां मनसि समानता आयाति। किञ्च गुरुकुले अनुशासनेन कर्तव्यपालनेन च चरित्रनिर्माणं भवति। अपि च त्यागभावना, सेवामनोभावना, सहजजीवनम्, अहिंसाभावना, सत्यपरिपालनं भौतिकसुखराहित्यमित्यादिगुणाः गुरुकुलाद् आगच्छति। किञ्च, जीवनसम्बद्ध जीविकोपार्जनार्थं व्यवसायकुशलतासम्पादनमपि गुरुकुलाद् भवति। इदानीमप्यस्माकं देशे अनेकत्र गुरुकुलानि अस्माकं प्राचीनसंस्कारसंस्कृतिसंरक्षणपुरस्सरं विलसन्ति।

– सहायकाचार्यः श्री भगवानदास आदर्श संस्कृत महाविद्यालयः हरिद्वारम्

पुण्य स्मृति पर हुआ वृक्षारोपण व शांति यज्ञ

जयपुर, स्व. सेठ लक्ष्मी नारायण स्मृति संस्थान जयपुर व मानव निर्माण एवं विश्व शांति संस्थान के "प्रणवी यश" फाउंडेशन द्वारा विगत वर्षों की भांति स्व. लक्ष्मी नारायण जी रामपुरा हिंडौन वाले तथा प्रणवी यश की पुण्य स्मृति में वृक्षारोपण व शांति यज्ञ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

संस्थान अध्यक्ष डॉ प्रमोदपाल के अनुसार आज रविवार को प्रातः महिर्षि अरविंद पार्क सैक्टर 34–35 मानसरोवर में वृक्षारोपण हुआ। सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के प्रदेशाध्यक्ष संस्थान संरक्षक यशपाल "यश "ने रजत पथ स्थित ओ३मानन्दम् परिसर में शांति यज्ञ कराया। यश ने वृक्षारोपण व यज्ञों द्वारा अपने वुजुर्गो की याद करना ज़हां सच्चा श्राद्ध बताया वहीं पर्यावरण रक्षा कर प्राणघातक बीमारियों से वचाने का सशक्त माध्यम प्रतिपादित किया। पवन आर्य राम किशोर शर्मा , श्रीमति प्रियंका व महेन्द्र सिंह के पितृ भक्ति को कल्याण मार्ग की राह बताने वाले गीतों का गायन हुआ।

वृक्षारोपण में श्रीमती ऊषा शर्मा, मधुरानी, श्रीमति कुरैशी ,पातंजलि के हेमकांत पाराशर, वी. एस. गुप्ता, विकास समिति अध्यक्ष मदनलाल खुराना, वन्दना आर्य, पलक यश नीरजा वंशल, दीपांकर सहित पचास वृक्ष प्रेमियों ने फलदार छायादार, औषधीय पौधों का रोपण किया।

'योगेश्वर श्रीकृष्ण' पुस्तक अवश्य पढ़ें

– लेखक स्व. पं. चमूपति एम. ए.

'योगेश्वर श्रीकृष्ण' नामक पुस्तक पृष्ठ संख्या–256, अच्छे जिल्द एवं कागज में छपकर तैयार है। जिसकी कीमत 100/: रुपये है, जिस पर 25 प्रतिशत छूट उपलब्ध है। परन्तु भेजने में डाक व्यय खर्च होता है। अतः एक पुस्तक मंगाने के लिए डाक व्यय सहित 100/– रुपये भेजकर मंगा सकते हैं।

प्राप्ति स्थान – सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, "महर्षि दयानन्द भवन" 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली–2

दूरभाष :–011–23274771, 23260985

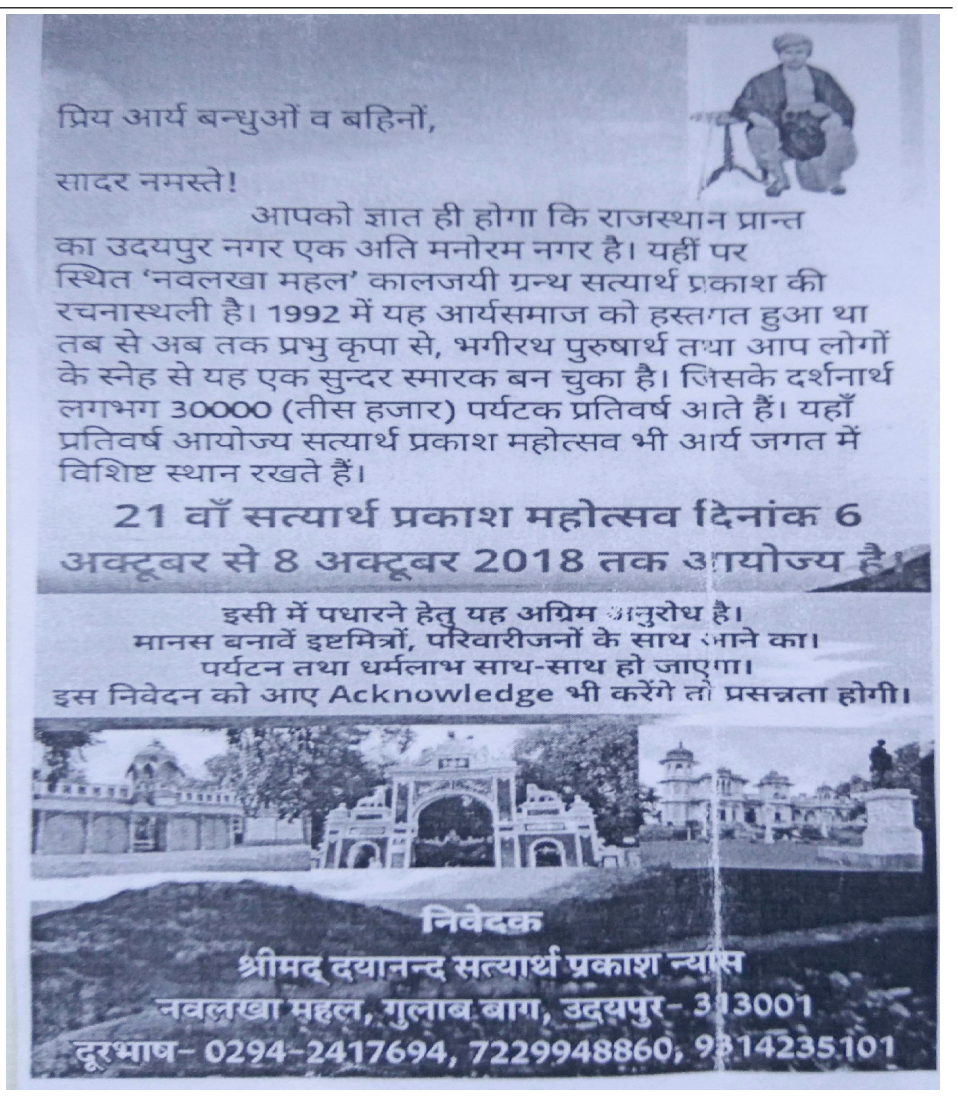

65 छात्राओं को यूनीफोर्म वितरण किया।

सरकारी स्कूलों से ही निकलते हैं राष्ट्र के भाग्य विधाता –"यश"

जयपुर मानव निर्माण एवं विश्व शांति संस्थान जयपुर के " प्रणवी यश फाउंडेशन" द्वारा राजकीय वालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय कावेरी पथ मानसरोवर पर 65 छात्राओं को यूनीफोर्म वितरण किया गया।

कार्यक्रम संयोजक श्रीमति प्रियंका के अनुसार वितरण संस्थान अध्यक्ष श्रीमति मधुरानी व श्रीमति पलक ने किया।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद के प्रदेशाध्यक्ष यशपाल "यश"ने अपने उद्बोधन में वालिकाओं को दैनिक जीवन शैली हेतु खान–पान की चीजों, बिजली, पानी व्यर्थ होने से वचाने, स्वच्छ रहने व ईश्वर के सर्वरक्षक सर्वशक्तिमान सर्वव्यापक स्वरूप समझ अन्धविश्वासों के प्रति जागरूक किया। यश ने कहा कि सरकारी स्कूलों से ही योग्यतम शिक्षकों द्वारा अभावो में शिक्षा पाने वाले तपे तपाये विद्यार्थी ही राष्ट्र के भाग्य विधाता नेता प्रशासनिक अधिकारी वनते हे। महंगी शिक्षा सामाजिक भेदभाव पूर्ण अहम देती हे जिनमे संघर्ष शक्ति का अभाव रहता हे।

डॉ प्रमोदपाल, समाज सेवी नीरज कन्दोई के साथ प्राचार्या श्रीमती लीला जैन ने धन्यवाद व्यक्त किया। मंच संचालन श्रीमति संगीता शर्मा ने किया।

पंजीयन संख्या DELMUL/2005/15488
डाक पंजीकरण संख्या DL(c)-01/1213/18-20
Licence to Post without prepayment of Postage. [U (c)-289/2018-20]

सोशल मीडिया के माध्यम से स्वामी आर्यवेश जी से जुड़ें

आर्य युवा सन्यासी व सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी से जुड़ने के लिए इस लिंक पर क्लिक करें www-facebook-com/SwamiAryavesh व फेसबुक पेज को लाइक करें व अन्य मित्रों को भी प्रेरित करें।

ई-मेल : aryavesh@gmail.com
Tel. :-011-23274771

प्रतिष्ठा में :–

अवितरण की दशा में लौटाएँ –
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
"दयानन्द भवन" 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली–110002

सब यज्ञों का महान् तत्त्व विश्वतोधार होना

स्वर्यन्तो नापेक्षन्तऽआ द्या´ रोहन्ति रोदसी।
यज्ञं ये विश्वतोधारँ् सुविद्वा´सो वितेनिरे।।
–यजु० १७/६८, अथर्व० ४/१४/४

ऋषिः–भृगुः ।। देवता–आज्यम् ।। छन्दः–अनुष्टुप् ।।

विनय–हमारे सब यज्ञ 'विश्वतोधार' होने चाहिएँ, पर प्रायः हमारे यज्ञ एकतोधार होते हैं। इसका अर्थ यह है कि हम दूर तक देखकर, सब संसार को दृष्टि में रखकर लोकोपकार नहीं करते, अतः हमारे ये यज्ञकार्य परिमित, अदूरगामी और एकपक्षीय होते हैं। हम केवल अपने समाज, अपने कुटुम्ब, केवल एक संस्था या केवल अपने देश व राष्ट्र के हित के लिए अपने उपकार–कार्य करते हैं और उनके लिए बड़े–बड़े स्वार्थ–त्याग तक करते हैं,पर यह ध्यान नहीं रखते कि वह संस्थाहित, देशहित, वह राष्ट्रहित संसार के हित के भी अविरुद्ध होना चाहिए। विश्वतोधार यज्ञ वह है जो 'सर्वभूतहित' के लिए होता है, जो सम्पूर्ण विश्व के भले के लिए, प्राणिमात्र के हित की दृष्टि से होता है, अथवा यूँ कहें कि जो परमात्मा की प्रीत्यर्थ होता है। वही यज्ञ पूरी तरह फैला, वितत होता है, व्यापक होता है। वही यज्ञ 'विष्णु' कहाता है। पर यज्ञ के इस 'विष्णु', 'विश्वतोधार' रूप को संसार में कुछ उत्तम ज्ञानी ही समझते हैं और ये विरले ही उसे वितत करते हैं, अतः ये 'सुविद्वान्' तो शीघ्र ही पृथिवी और अन्तरिक्ष के स्थूल और मानसिक लोकों को लाँघकर आत्मा के सुखमय और प्रकाशमय लोक में चढ़ जाते हैं, आसानी से पहुँच जाते हैं। वे उस आत्मिक सुख की ओर जाते हुए, उसका आनन्द लेते हुए दुनिया की किसी भी अन्य वस्तु की परवाह नहीं करते। 'विश्वतोधार' यज्ञ करने वालों को 'स्वः' का एक ऐसा दृढ़ अवलम्बन मिल जाता है कि वे फिर संसार के अन्य किसी भी सहारे की तनिक भी अपेक्षा नहीं करते। चाहे उनके साथी उनसे छिन जाएँ, उनका प्रभुत्व नष्ट हो जाए, उनकी सब प्रतिष्ठा जाती रहे, पर वे इन सहारों के रखने के लिए भी कभी अपने यज्ञ को थोड़ी देर के लिए भी छोटा, अव्यापक नहीं करते। वे अपनी दृष्टि को कभी नीची या संकुचित नहीं करते। ऊपर चढ़ते हुए नीचे की क्षुद्र चीज़ों पर कभी उनकी दृष्टि ही नहीं पड़ती। यही रहस्य है जिससे वे ऊपर–ऊपर ही जाते हैं और शीघ्र सुखमय–प्रकाशमय द्युलोक में जा पहुँचते हैं।

शब्दार्थ–**ये**=जो **सुविद्वांसः**=उत्तम ज्ञानी महापुरुष **विश्वतोधारं यज्ञम्**=विश्वतोधार यज्ञ को, सबको सब ओर से धारण करने वाले यज्ञ को **वितेनिरे**=विस्तृत करते हैं वे **स्वः यन्तः**=आनन्दमय स्थिति को जाते हुए **न अपेक्षन्त**=किसी अन्य वस्तु की अपेक्षा नहीं करते या नीचे नहीं देखते, **रोदसी**=वे द्यावापृथिवी को लाँघकर **द्याम्**=द्युलोक में **आरोहन्ति**=चढ़ जाते हैं।

साभार- 'वैदिक विनय' से
आचार्य अभयदेव विद्यालंकार

।।ओ३म्।।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा 25 हजार वेद सैट प्रकाशित करने की महत्त्वाकांक्षी योजना

वेदाः ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अथर्ववेद

घर–घर तक पहुँचाई जायेगी परमात्मा की वेद वाणी

चारों वेदों का सम्पूर्ण हिन्दी भाष्य

लागत मूल्य 4100/- रुपये

(महर्षि दयानन्द, तुलसीराम स्वामी एवं पं. क्षेमकरण दास कृत)

(10 खण्ड, 9 जिल्दों में)

भारी छूट पर उपलब्ध

4100/- रुपये का एक वेद सैट 25 प्रतिशत की छूट पर उपलब्ध है

10 अथवा उससे अधिक वेद सैट लेने पर 30 प्रतिशत की छूट दी जायेगी

प्रत्येक आर्य समाज, स्कूलों के पुस्तकालयों, वाचनालयों तथा प्रत्येक घर में परमात्मा की वाणी वेदों का होना आवश्यक है। अधिक से अधिक संख्या में अग्रिम आदेश भेजकर भारी छूट का लाभ उठायें। डाक व्यय 200/- रुपये अलग से देना होगा। प्रारम्भिक स्तर पर 25 हजार वेद सैट प्रकाशित करने की योजना क्रियान्वित की जायेगी।

अपना आदेश **'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा'** के नाम चैक/बैंक ड्राफ्ट द्वारा "दयानन्द भवन" 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली–2 के पते पर अग्रिम भेजकर अपना वेदों का सैट बुक करा सकते हैं।

–: प्रकाशक :–

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, "दयानन्द भवन" 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली–110002

प्रो० विट्ठलराव आर्य, सभा मंत्री, प्रकाशक व मुद्रक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, 3/5 महर्षि दयानन्द भवन, (रामलीला मैदान/आसफ अली रोड), नई दिल्ली-110002 के लिए प्रकाशित तथा ज्योति प्रिंटिंग प्रेस, ई-94, सैक्टर-6, नोएडा-201301 से प्रकाशित एवं मुद्रित। (फोन : 011-23274771, 23260985 टेलीफैक्स : 23274216)
सम्पादक : प्रो० विट्ठलराव आर्य (सभा मन्त्री) मो.:0-9849560691, 0-9013251500 ई-मेल : sarvadeshik@yahoo.co.in, sarvadeshikarya@gmail.com वैबसाइट : www.vedicaryasamaj.com
वैदिक सार्वदेशिक साप्ताहिक में छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक या सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की सैद्धान्तिक मतैक्यता होना अनिवार्य नहीं है।